633
ज

अ

से
जी
तो
रह
कह
सुध

मनोज

# जलती चिता

(एक सामाजिक उपन्यास)

आ

से

जीवन क

तोड़ती आ

रही थी। ख

कहा करती

सुधा के हाथ

© प्रकाशकाधीन

| | |
|---|---|
| **प्रकाशक** | मनोज पाकेट बुक्स,<br>१५८४, दरीबा कलां,<br>दिल्ली-६ |
| **मुद्रक** | वार्ष्णेय प्रिंटिंग प्रेस,<br>विश्वासनगर, शाहदरा,<br>दिल्ली-११००३२ |

JALTI CHITA : NOVEL :

मूल्य : तीन रुपये

# जलती चिता

जिस प्रकार इन्सान बहुत ज्यादा प्रसन्नता प्राप्त करके लगातार मुस्कराने लगता है, ठीक उसी प्रकार आज शान्ति भवन मुस्करा रहा था। नवीनतम ढंग की बनी हुई इस छोटी-सी, मगर सुन्दर एवं शानदार इमारत के चेहरे पर हसीन मुस्कराहटों का तांता-सा लग गया था। एक मुस्कराहट जाती तो दूसरी आ जाती।

और ठीक यही दशा लाला शान्तिप्रसाद की थी। वे आज खुशी से फूले नहीं समा रहे थे। खुशी से भरपूर आवाज में चीख-चीखकर उन्होंने पूरे शान्ति भवन को जैसे सर पर उठा रखा था। कभी नौकरों को सफाई का आदेश देते तो कभी स्वयं ही नौकरों के साथ मिलकर ड्राइंगरूम आदि को सजाने में जुट जाते और कभी किचन में बैठी हुई अपनी पत्नी को जोर-जोर से बताने लगते कि उसे क्या-क्या तैयार करना है।

और इस सारी खुशी का कारण यह था कि आज उनकी युवा तथा सुन्दर सुपुत्री सुधा को देखने के लिए लड़के वाले आ रहे थे। आज ही बात पक्की हो जानी थी और···उफ, कितना अरमान था उन्हें यह दिन देखने का। लगता था जैसे वर्षों बाद अन्ततः भगवान ने उनकी सुन ली हो। नहीं, उनकी नहीं, बल्कि जैसे उनकी रोगग्रस्त पत्नी की सुन ली हो। वह बेचारी कितनी बेचैनी से इस दिन की प्रतीक्षा कर रही थी, कितनी आशा थी उसके मन में। रोग से लगातार संघर्ष करते-करते उसका शरीर जर्जर हो चुका था। जीवन की सब अभिलाषाएं लगभग दम तोड़ चुकी थीं और इन दम तोड़ती अभिलाषाओं के बीच उसकी एक ही तो अभिलाषा बाकी रही थी। खांसते-खांसते निढाल होने के बाद वह अक्सर एक ही बात कहा करती थी—"हे भगवान ! किसी प्रकार जल्दी-से-जल्दी मेरी सुधा के हाथ पीले कर दे और फिर मुझे इस संसार से उठा ले। अब

और दुःख नहीं सहे जाते···बस यह खुशी दे दे भगवान ताकि मैं आराम से मर सकूं।"

तब शान्तिप्रसाद अपनी पत्नी के मुख पर हाथ रखकर कहते—"नहीं, सुधा की मां ऐसा नहीं कहा करते, भगवान के घर में देर है अन्धेर नहीं···तुम ठीक हो जाओगी सुधा की मां और फिर तुम्हारी बेटी तो अभी अट्ठारह साल की है फिर ऐसी जल्दी ही क्या है।"

"तुम तो जानते ही हो सुधा के बापू, अब मैं अधिक नहीं जी सकती···मेरी यही अभिलाषा है कि मेरे जीते जी मेरी बेटी के हाथ पीले हो जाएं ताकि मैं चैन से मर सकूं।"

शान्तिप्रसाद ये बातें सुनकर शान्ति भवन के किसी कोने में पहुंचकर किसी अबोध बालक की भांति फूट-फूटकर रो पड़ते।

उनके जीवन में किसी बात की कमी न थी—खूबसूरत बेटी थी, एक जवान और सुन्दर लड़का शेखर था, अपार धन था, नौकर-चाकर थे तथा वफादार पत्नी थी। ऐसी पत्नी जिसने उनके साथ मिलकर अनेक कठिन मौसम झेले थे।

सहसा उन्हें याद आने लगे अपनी युवावस्था के वे दिन जब वे व्यापार में असफल हो जाने के कारण लगभग आत्महत्या करने का निश्चय कर चुके थे, तो वही तो थी जिसने उन्हें जीना सिखाया था, उनके साथ उपवास किए थे, उन्हें हिम्मत के साथ परिस्थितियों का सामना करने का गुर सिखाया था। कदम-कदम पर उनका साहस बढ़ाया था। और वही शान्तिप्रसाद जिनको पूरी दुनिया ठुकरा चुकी थी, जिनकी छाया से अपने तक दूर भागने लगे थे और जो स्वयं अपनी पत्नी के वफादार नहीं थे—जो कीमती मदिराओं तथा स्त्रियों से अपना मन बहलाया करते थे। उनकी पत्नी यह सब कुछ जानती थी। तो भी उसने उन दिनों उनकी पूजा की। जबकि एक-एक करके सभी उनका साथ छोड़ चुके थे, उनके वह घनिष्ट मित्र भी जो उनके गिलास से गिलास टकराया करते थे और वह व्यवसायी स्त्रियां भी जो उनके अन्तिम सांस तक उनकी वफादार रहने का दावा करती थीं।

उस समय उनकी पत्नी ही थी जिसने उनका साथ दिया था फिर जब वे व्यापार में दुबारा संभले तो उन्हें खरे-खोटे की पहचान

हो चुकी थी, उन्हें पता चल चुका था कि प्रत्येक चमकने वाली वस्तु सोना नहीं होती—उन्हें मालूम हो चुका था कि इस पापी संसार में मित्रता मनुष्य से नहीं, उसके वैंक-वैलेन्स से की जाया करती है।

व्यापार में भारी असफलता के उपरान्त जब वह संभले तो उन्हें एक प्रकार की खुशी ही हुई। वह धक्का जिसने उन्हें उपवास करने को मजबूर कर दिया था, उसने उन्हें बिल्कुल सुधार दिया था। जैसे-जैसे वह उन्नति करते गए, उन्होंने भगवान का शुक्र अदा करना शुरू कर दिया। वह अक्सर कहा करते थे—"तूने जो कुछ भी किया अच्छा ही किया भगवान, तूने मुझे सीधे मार्ग पर लाने के लिए ही तो मुझे इतने ढेर सारे दुःख दिये थे।"

वह उन दुःखों पर प्रसन्न थे। परन्तु उन दुःखों के एक पहलू पर उन्हें बहुत अफ़सोस था। वह पहलू उनकी पत्नी से सम्बन्धित था, एक दिन उनकी पत्नी का निरीक्षण करने वाले डाक्टर ने उन्हें अलग ले जाकर कहा था—"अब इनका बहुत ख्याल रखने की जरूरत है। क्योंकि अब वह एक चलती-फिरती लाश में बदल चुकी हैं। लगातार दुःख सहन करते रहने के कारण इन्हें फेफड़े की टी०बी० हो चुकी है, समझे लालाजी...।"

और शान्तिप्रसाद की निगाहों में दुनियां अन्धेरी हो चुकी थी। परन्तु वह कर भी क्या सकते थे। सिवाए इसके कि अपनी पत्नी की लगातार देखभाल रखें, उसका इलाज कराते रहें और उसकी हर खुशी का ख्याल रखें—यही कारण था कि वह सुधा की शादी के लिए अत्यन्त चिन्तित थे। वरना क्या कमी थी उनकी सुधा में, ग्रेजुएट थी वह—सुन्दर इतनी कि लाखों में एक और फिर उनके पास पैसे की भी तो कमी नहीं थी। परन्तु अपनी पत्नी का वह क्या करते जो हमेशा कहा करती—"शेखर का क्या है लड़का है, शादी करे न करे...परन्तु लड़की तो घर की लाज हुआ करती है और जवान लड़की, मुझे तो रातों को नींद भी नहीं आती, भगवान करे कोई अच्छा-सा लड़का मिल जाये, मैं अपनी सुधा के हाथ जल्दी-से-जल्दी पीले कर दूं ताकि मैं आराम से मर सकूं।"

जब-जब शान्तिप्रसाद यह बात सुनते तो व्याकुल हो उठते, उनका वस चलता तो वे एक क्षण में अपनी पत्नी की खुशी पूरी कर

देते।

आज आखिरकार वह दिवस आ गया था'''उनकी बेटी को देखने के लिए लड़के वाले आ रहे थे। कितना बड़ा घर था उन लोगों का—बाप नगर का माना हुआ डाक्टर था, कई हजार रुपये मासिक की आय थी। सन्तान के नाम पर मात्र एक लड़का था उसका—और वह लड़का कितना सुन्दर था—इसे शान्तिप्रसाद का मन ही जानता था। पहले उन्हें अपने शेखर से ज्यादा सुन्दर लड़का कोई नजर ही नहीं आता था मगर उसे देखकर उन्हें स्वीकार करना पड़ा था कि वह भी शेखर से कम नहीं है। वह सचमुच सुन्दर था, उसे देखकर यही जी करता था कि बस देखते रहो। इन्जीनियर था वह और इन दिनों एक डैम पर काम कर रहा था। लड़की को देखने के लिए वह विशेष रूप से छुट्टी लेकर आया था। इन हालात में शान्तिप्रसाद खुश क्यों न होते—और शान्ति भवन क्यों न मुस्कराता।

परन्तु इस खुशी के समय में भी शान्ति भवन के शरीर का एक टुकड़ा पीड़ा से कराह रहा था। वह रो भी रहा था और वह टुकड़ा'''सुधा का कमरा था, जहां शान्तिप्रसाद की बेटी सुधा कीमती साड़ी में लिपटी दर्पण के आगे बैठी मेकअप करती हुई टप-टप आंसू बहा रही थी।

रह-रहकर उसके मन में यह विचार आ रहा था—कितना बड़ा विश्वासघात है यह आनन्द के साथ'''आनन्द जो उसके समस्त अस्तित्व पर छाया हुआ था''' जो आकाश बनकर उस पर फैल गया था जिसने उसे चारों तरफ से ढक लिया था'''उसे रह-रहकर आनन्द का वह आलिंगन याद आ रहा था जिसमें बंधकर वह एक अजीब-सी शांति महसूस करती थी। और उस पर एक नशा-सा छा जाता था। याद आ रहे थे उसे उसके वह वायदे जिनका सहारा लेकर उसने उसकी इज्जत को पल-भर में लूट लिया था।

परन्तु आज'''आज कोई मुझे पसन्द करने आ रहा है'''और वह'''वह दूर अपने मकान के किसी कमरे में चुपचाप बैठा होगा''' आज अगर आने वाले ने मुझे पसन्द कर लिया और बात पक्की हो गई तो'''यह सब कुछ कैसे होगा जबकि मेरे अस्तित्व में आनन्द

की एक निशानी है…एक निशानी जो तीन मास के एक अपूर्ण बालक के रूप में मेरे शरीर के भीतर…।

वह तड़प उठी—उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बह निकली और वह एक अजीब-से दर्द में डूब गई। फिर झपटकर उसने टेलीफोन का रिसीवर उठाया और आनन्द के नम्बर मिलाकर बोली—
"हैलो, कौन आनन्द ? मैं सुधा बोल रही हूं।"

"सुधा ?" दूसरी ओर से आनन्द की आवाज आई—"मैंने एक लेडी डाक्टर से बात कर…।"

"आनन्द…!" सुधा तड़पकर बोली—"तुम्हें शर्म नहीं आती …ऐसी बात सोचते हुए, क्या तुम अपने प्यार की निशानी को जो एक कली के रूप में मेरे पेट में पल रही है, फूल बनने से पहले ही मसल देना चाहते हो…लेकिन यह अच्छी तरह समझ लो, मैं ऐसा हरगिज नहीं होने दूंगी। तुम्हें मालूम है कि इस समय मुझे लड़के वाले देखने आ रहे हैं, मगर…तुम…तुम इसी फिक्र में लगे हुए हो कि…।"

"परन्तु यह बहुत आवश्यक कार्य है सुधा।"

"मुझ पर रहम करो आनन्द…तुम्हें अपने प्यार की कसम… तुम मुझे अपना लो, तुम इस पवित्र फूल को दुनिया की नजर में पाप का फूल मत बनाओ, आनन्द…।" कुछ रुककर वह फिर बोली—

"क्या…क्या तुम अपने पापा से नहीं कह सकते कि तुम मुझसे शादी करना चाहते हो…अब भी समय है आनन्द…भगवान के लिए अपने पापा से बात करके मुझे बरबाद होने से बचा लो आनन्द, वरना मैं दुनिया की नजरों में किसी को मुंह दिखाने लायक नहीं रहूंगी।"

"यह सब बकवास है, तुम समझती क्यों नहीं सुधा, मैं मजबूर हूं।"

"मजबूर, ऐसी कौन-सी मजबूरी आ पड़ी है, तुम्हारे रास्ते में…।" सुधा ने क्रोधपूर्ण स्वर में कहा।

"म…मैं अभी शादी नहीं कर सकता।"

"क…क्यों ?" सुधा ने कांपते स्वर में पूछा।

"पापा मुझे उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड भेज रहे हैं, इस-

लिए…।"

"आनन्द !" सुधा धीरे से चिल्ला पड़ी।

"मुझे समझने की कोशिश करो सुधा, मेरी मजबूरियों को समझो, हम दोनों से जो गलती हो गई है, मैं उसकी पूर्ति इस प्रकार कर सकता हूं कि लेडी डाक्टर…।"

"मुझे मालूम नहीं था कि तुम इतना गिर जाओगे आनन्द तुम चाहते हो कि मैं अपने पेट में पल रही निशानी का स्वयं ही गला घोंट दूं…लेकिन इतना याद रखो मैं कभी ऐसा नहीं कर सकती…मैं तो क्या दुनिया में कोई भी मां अपने बेटे का कत्ल अपने ही हाथ से नहीं कर सकती…क्योंकि वह एक मां होती है।"

"सुधा…सुधा !"

सुधा ने कोई उत्तर दिए बिना ही रिसीवर क्रेडिल पर रख दिया और फूट-फूटकर रोने लगी।

टेलीफोन करने के बाद उसके दुःख में बढ़ोत्तरी हो गई थी-दिल बुरी तरह जख्मी हो चुका था।

सामने रखे हुए एक छोटे-से स्याह राक्षस की भांति नजर आने वाले टेलीफोन नाम के यन्त्र ने उसे बताया था कि आनन्द बेवफाई पर तुला बैठा है। वह बीच मंझधार में उसे छोड़कर किनारे की ओर अंधा-धुन्ध भाग रहा है—फिर अपनी सहेली कमलेश की एक बात उसे याद आई—वह अक्सर कहा करती थी—

"सुधा, प्रेमी केवल आत्मा को चाहे तो आकाश की बुलन्दियों से भी ज्यादा ऊंचा व महान् होता है…परन्तु यदि विवाह से पूर्व शरीर को चाहने लगे तो वह राक्षस होता है। केवल शरीर को चाहने वाले से कभी वफा की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए।"

खूबसूरत आनन्द को हालात ने राक्षस का रूप दे दिया था। सुधा सोच रही थी, पहले उसकी बातें कितनी मधुर होती थीं ! प्यार का देवता नजर आता था वह, परन्तु अब एक निर्दयी राक्षस की भांति वह लेडी डाक्टर की बात कर रहा था। एक पाप करने के बाद वह दूसरा पाप करना चाहता था और कराना चाहता था, वह एक नन्हें से अपूर्ण अस्तित्व का पूर्ण निर्दयता के साथ गला घोंट देना चाहता था और सुधा से भी उसकी यही मांग थी कि वह भी दो

हाथों से उस अपूर्ण बालक को इतना अधिक भींचे—इतना कि वहां कुछ न रहे।

उसकी बेवफाई पर वह फूट-फूटकर रोती रही—बाहर से आने वाली आवाजों से उसे पता चलता रहा कि लड़की देखने वाले आ चुके हैं। लाला शान्तिप्रसाद उनके आगे बिछे जा रहे थे। ड्राइंगरूम की छत कहकहों से गूंज रही थी—वह सोचती रही, सोचती ही रही, वह क्या करे···जो लड़का उसे देखने आ रहा है यदि वह उसे पसन्द कर लेता है तो क्या यह सब कुछ उस लड़के के साथ विश्वास-घात नहीं होगा ?"

"क्या उसे आत्महत्या कर लेनी चाहिए।" इस विचार के आते ही वह कांप उठी। तभी कंधे पर अंगोछा ठीक करते हुए रामू काका ने सुधा के कमरे के पास आकर कहा—"बिटिया रानी, लड़के वाले आ गये···जल्दी से तैयार होकर नीचे आओ।"

सुधा ने काका की आवाज सुनकर जल्दी से अपने आंसू पोंछे और सर झुकाकर रामू काका के साथ चल पड़ी।

मां ने बड़े प्यार से नीचे उसका स्वागत किया। उसके सर पर कंपकंपाता स्नेहपूर्ण हाथ फेरा, उसे ममता-भरी आवाज में आशीर्वाद दिया और उसे चाय व नाश्ते की ट्रे के साथ ड्राइंगरूम की तरफ जाने की हिदायत देकर उसे डबडबाई हुई आंखों से देखती रही। उस समय तक जब तक कि वह नजर आती रही, उसे देखते हुए मां के दुर्बल चेहरे पर आंसुओं की बूंदें टूटती रहीं। वह रोती रही यह सोच-सोचकर कि उसकी सारी जिन्दगी की जमा-पूंजी यही लड़की तो है···जिसे वह आज किसी और को सौंप देने का यत्न कर रही है। वह एक मालिन थी और सुधा उसके बाग का सबसे ज्यादा मूल्यवान पुष्प···उस पुष्प को पुष्प बनाने में कितना कड़ा परिश्रम किया था उस वृद्ध स्त्री ने। उसकी देख-भाल में कभी न गिनी जाने वाली लम्बी-लम्बी काली रातें उसने जाग-जागकर बिताई थीं, ताकि किसी तरह शान्ति भवन की लाज रह जाये। उस खूबसूरत इमारत के आंचल पर कोई काला धब्बा न लग जाये। यह इमारत हमेशा सर ऊंचा किए यूं ही खड़ी रहे···और···और पुरखों की बनी हुई इमारत में कहीं कोई दरार न पड़ जाए।

और उधर सुधा आंसुओं का तूफान रोके ड्राइंग रूम में दाखि हो चुकी थी। उसने केवल एक नज़र अतिथियों पर डाली —साम सोफे पर लड़का था—उसका पिता था और उसकी मां थी। व लोग पूरे अंग्रेज नज़र आते थे, सूट पहने हुए।

ट्रे सेन्टर टेबल पर रखकर सुधा ने हाथ जोड़कर उन्हें नमस की और लजाई-सी एक तरफ खड़ी हो गई। लड़का उसे गौर देख रहा था।

लड़के का बाप खिलखिला कर हंस पड़ा। फिर बोला—"व पुराना तरीका…शान्तिप्रसाद जी…आपके घराने में तो वही पुरा रीति-रिवाज़ आज भी चल रहे हैं…ज़माना कितना बदल चुका और आप अब तक वहीं हैं…अरे बैठो ना बेटी!" लड़के के बाप सुधा को बैठने के लिए सम्बोधित करते हुए कहा।

शान्तिप्रसाद मुस्कराकर बोले—"ज़माना कितना ही बद जाए द्वारिकादास जी लेकिन वह चीज़ें कभी नहीं बदलतीं जिन् सभ्यता कहा जाता है।"

"वही पुराने विचार…।" द्वारिकादास ने फिर कहक लगाया।

सुधा सामने वाले सोफे पर बैठ चुकी थी। उसका पूरा शरी कंपकंपा रहा था। एक अनजान भय उस पर सवार होता जा र था।

शान्तिप्रसाद केवल मुस्कराकर रह गए। वह बहस नहीं करन चाहते थे—जबकि वह बहस कर सकते थे। परन्तु उचित यही कि बात चाहे गलत हो—मुस्कराकर टाल दी जाए, क्योंकि व लड़की वाले थे और लड़की वाले को कहां-कहां दबना पड़ता है इसक उन्हें भली-भांति एहसास था।

"क्या नाम है बेटी तुम्हारा!" द्वारिकादास ने सुधा से पूछा

सुधा सर झुकाए खामोश बैठी रही।

"उत्तर दो बेटी!" शान्तिप्रसाद ने स्नेहपूर्ण स्वर में कहा।

"स…सु…सुधा।" सुधा ने सर झुकाए ही कहा।

"बहुत शर्मीली है आपकी लड़की।" द्वारिकादास ने कहकह लगाया—"समझ में नहीं आता, पढ़ी-लिखी लड़कियां भी इतन

शर्मीली क्यों होती हैं ?"

द्वारिकादास की बात सुनकर शान्तिप्रसाद ज़बरदस्ती मुस्कराने लगे।

लड़का बड़े गौर से सुधा को देख रहा था। उसके चेहरे पर सुधा को पसन्द कर लेने वाले भाव थे।

और द्वारिकादास अपने लड़के की निगाहों को ताड़ चुके थे। उनके अधरों पर मुस्कराहट फैली हुई थी। फिर वह बोले—"शान्तिप्रसादजी आपकी लड़की हमें पसन्द है। बस थोड़ी-सी शर्मीली है। खैर मुझे तो शर्मीली लड़कियां पसन्द नहीं परन्तु हमारे अजय को यही चीज़ पसन्द है, वह भी पुराने विचारों का ही मालिक है...।" इतना कहकर वह कहकहे लगाने लगे।

शान्तिप्रसाद का तो खुशी के मारे बुरा हाल था।

एक ओर खड़े बूढ़े रामू काका को भी बिटिया के पसंद आ जाने की कोई कम खुशी नहीं हुई थी। क्योंकि वह सुधा को अपनी बेटी के समान मानता था।

परन्तु अचानक सुधा का सर बड़े ज़ोर से चकराने लगा था। द्वारिकादास के शब्द हथौड़े बनकर उसके मस्तिष्क पर बरस रहे थे और अब तक उसके दिमाग में गूंज रहे थे। कोई भयानक-सी वस्तु उसकी आंखों के सामने नाच रही थी और चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी—"विश्वासघात...विश्वासघात...!" उसका सर लगातार चकरा रहा था—उसने सहारा लेने के लिए सोफे का हत्या पकड़ा मगर दिमाग घूमता रहा। आंखों के सामने विभिन्न रंगों के अनेक तारे तेज़ी से नाचने लगे। यहां तक कि उसका सर एक ओर लुढ़क गया और वह अचेत हो गई।

सुधा की हालत देखकर शान्तिप्रसाद व रामू काका उछल पड़े।

यही हालत अजय और उसके माता-पिता की भी हुई।

द्वारिकादास ने आश्चर्य से पूछा—"यह क्या हुआ सेठ शान्तिप्रसाद जी !"

शान्तिप्रसाद सुधा को झंझोड़ते हुए घबराकर बोले—"ब...ब...बेहोश हो गई है शायद।"

"मगर क्यों ?" डा० द्वारिकादास ने प्रश्नपूर्ण स्वर में पूछा।

शान्तिप्रसाद सोचने लगे कि क्या उत्तर दें···फिर जल्द बोले "शायद कमज़ोरी से···अभी-अभी बीमारी से उठी है···बुखार गया था इसे ?"

"इलाज किसका कराया था ?"

"किसी का भी नहीं।" सेठ शान्तिप्रसाद ने हड़बड़ाहट में कहा

"हटिए···मैं देखूं।" द्वारिकादास ने सेठ शान्तिप्रसाद को तरफ हटाते हुए कहा।

"अरे हां—आप तो डाक्टर हैं···मैं भूल ही गया था।"

द्वारिकादास आगे बढ़कर एक अनुभवी डाक्टर की तरह सुधा मुआयना करने लगे। कुछ क्षणों तक तो यह मुआयना प्यार स्नेहपूर्ण मुद्रा में होता रहा परन्तु फिर उनके मस्तिष्क पर बल गए। चेहरे पर क्रोध के भाव फैल गए। आंखें अंगारे बरसाने ल और वह सुधा को छोड़कर एक झटके के साथ सीधे खड़े हो गए

"क···क्या बात है ?" शान्तिप्रसाद ने घबराकर पूछा।

"बात !" द्वारिकादास गुर्राए। क्रोध के कारण उनके होंठों झाग निकलने लगे। वह गुर्राए—"यह पूछिए कि क्या बात नहीं है

"द्वारिकादास जी !"

"चीखने की कोशिश मत कीजिए शान्तिप्रसाद,···उफ···इतने भारी धोखा।"

"आप कहना क्या चाहते हैं ?"

"वही जिसे सुनने से पहले एक गैरतमन्द बाप को आत्मह कर लेनी चाहिए।"

"क···क्या ?" सेठ शान्तिप्रसाद का मुंह हैरत से खुल गया

"आपकी लड़की गर्भवती है।"

"द्वारिकादास जी !" शान्तिप्रसाद गुर्राए—उनकी आंखों खून उतर आया और वह चिल्लाकर बोले—"ज़बान संभालकर बात कीजिए—आप मेरी लड़की पर झूठा इल्जाम लगा रहे हैं।'

"चिल्लाइए मत शान्तिप्रसाद जी···चिल्ला-चिल्लाकर तु हकीकत को झुठला नहीं सकते।"

"फिर वही बकवास।"

"यह बकवास नहीं हकीकत है, वह तो भगवान का लाख-ला

शुक्र है कि…।"

"आपको धोखा भी हो सकता है।" सेठ शान्तिप्रसाद ने जलते हुए स्वर में कहा।

"यह द्वारिकादास नहीं, बल्कि उसका पच्चीस वर्षीय अनुभव बोल रहा है…समझे शान्तिप्रसाद !"

"यह झूठ है…यह झूठ है।"

"यदि यह झूठ हुआ तो मैं डाक्टरी का पेशा छोड़ दूंगा…।" द्वारिकादास ने गुर्राकर कहा—"यह कूड़ा क्या हमारे पल्ले ही बांधने के लिए रह गया था।"

"बकवास बन्द करो…और निकल जाओ यहां से…।" शान्तिप्रसाद पूरी शक्ति से चीखे।

"हम स्वयं ऐसे घर में ठहरना नहीं चाहते…अपनी ज़बान को लगाम दो शान्तिप्रसाद…शीशमहल में बैठकर दूसरों पर पत्थर मत उछालो…यदि मेरी ज़बान खुल गई तो नगर में किसी को मुंह दिखाने के काबिल न रहोगे…चलो अजय…भगवान का शुक्रिया अदा करो कि तुम्हारे भाग्य फूटते-फूटते रह गए।"

शान्तिप्रसाद को मानो सांप सूंघ गया था…फटी-फटी आंखों से सामने वाली दीवार को घूरते हुए वह इस प्रकार निश्चल खड़े थे जैसे पत्थर की मूरत हों…निश्चल…स्थिर।

• ० ०

मार-मारकर उसे अधमरी कर देने के बाद शान्तिप्रसाद ने गुर्राकर पूछा—"बताती है कि नहीं…कौन है वह पापी जिसने मेरे भरे-पूरे घर में आग लगाकर मेरे कुल की मान-मर्यादा की होली जलाई है। जिसने मेरे पुरखों की बनाई हुई इज्जत को बीच चौराहे पर ठोकरें मार-मारकर तोड़-फोड़ डाला है, बोल…बोलती क्यों नहीं, कलंकनी कौन है, वह जिसने मेरे चेहरे पर कालिख पोत दी है।"

सुधा घुटनों में सर दिए बिलख-बिलख कर रोती रही।

"बता दे सुधा वरना…वरना मैं और नीचता पर उतर आऊंगा आज मैंने जीवन में पहली बार नारी जाति पर हाथ उठाया है और आज ही…हो सकता है कि मैं हत्या भी कर दूं।"

"प···पिताजी···।" सुधा ने डर से कांपते हुए कहा।

"खबरदार···जो अपनी गन्दी ज़बान से मुझे पिता कहा··· पूछता हूं कौन है वह पापी···मुझे उसका नाम बता दे···ताकि दुनिया के सबसे ज्यादा नीच मनुष्य को देख सकूं···ताकि मैं राक्षस के दर्शन कर सकूं जिसे अपने हाथ तापने के लिये दूसरों घर जलाने की ज़रूरत पड़ती है···।"

सुधा घुटनों में सर दिए बिलख-बिलखकर रोती रही—

शान्तिप्रसाद गुर्राकर उस पर झपटे और निर्दयतापूर्वक उ शरीर पर ठोकरें बरसाने लगे।

"प···पिताजी, पिताजी!" सुधा ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

"उसका नाम बता दे सुधा···!" शान्तिप्रसाद ने दांत पीस कहा—"वरना···मैं तुझे जान से मार डालूंगा।"

"आनन्द-आनन्द···स सेठ केदारनाथ का पुत्र···।" सुधा सहमे से स्वर में कहा।

शान्तिप्रसाद के पैरों को मानो ब्रेक लग गए···उनकी मुट्ठि सख्ती से भिचती चली गईं। जबड़ों की मांस पेशियां तेज़ी से उभ और पिचकने लगीं।

ठीक उसी क्षण दरवाज़ा एक झटके के साथ खुला—शान्ति प्रसाद चौंककर पलटे।

दरवाज़े में शेखर खड़ा था। उसका चेहरा भी गुस्से से लाल रहा था—बिल्कुल अंगारे की तरह···आंखों में आंसुओं की चमक रही थीं। धोती और कुरता पहने वह गम व गुस्से की जीत जागती तस्वीर नजर आ रहा था। उसने दरवाजे पर खड़े हुए कुछ सुन लिया था।

"सुन लिया तुमने शेखर।"

"हां—पिताजी···आनन्द दीदी का क्लासफैलो था मगर··· शेखर की मुट्ठियां भिचती चली गईं—"इसके लिए उसे बहुत ब कीमत चुकानी पड़ेगी।"

"शेखर...!" शान्तिप्रसाद ने उसे क्रोध से घूरते हुए कहा।

"हां···पिताजी···मैं उसे छोड़ूंगा नहीं।"

"क्या करोगे तुम···!"

"इसका जवाब वक्त देगा।"

"शेखर···क्या तुम भी मेरी रही-सही इज्जत की धज्जियां उड़ाने पर तुले बैठे हो···क्या तुम चाहते हो कि आसमान की इस अग्नि को तुम्हारे इन्तकाम से और हवा लगे और कल यह कहानी नगर के बच्चे-बच्चे की ज़बान पर हो।"

"पिताजी !" शेखर का स्वर विरोधपूर्ण था।

"होश में आओ शेखर···।" शान्तिप्रसाद के स्वर में अचानक नम्रता आ गई। वह शेखर के तेवर देखकर एकदम नर्म पड़ गए और प्रार्थना करने वाली मुद्रा में बोले—"भगवान के लिए कम-से-कम चौबीस घण्टे प्रतीक्षा करो—मैं केदारनाथ से मिलूंगा—म···मैं उन से अपनी इज्ज़त की भीख मांगूंगा।" अन्तिम वाक्य कहते समय शान्तिप्रसाद की आवाज़ रुंध गई और वह कमरे से बाहर निकल गए।

सुधा अब तक सिसक रही थी।

शेखर उसे घूरता रहा। फिर उसके निकट पहुंचकर बोला—"दीदी—बाजार में विष भी तो मिला करता है—मां—मैं और पिताजी तुम्हारी आंखों में इतने ही खटक रहे थे तो मुझसे ही कह देतीं···विष मैं ला देता···हम तीनों को पिला देतीं···उपकार होता यह तुम्हारा हम तीनों पर।"

"श···शेखर···मेरे···भ···भैया।"

"मर गया तुम्हारा भाई···बेमौत मारा गया···भगवान दुश्मन को भी ऐसी मौत न दे।"

"म···मैं निर्दोष हूं शेखर···उसने मुझसे शादी का वायदा किया था···वह···वह।"

"दोष तो हमारा है···मां का है जिसने त्याग तथा बलिदान की मूर्ति बनकर तुम्हारी एक-एक मुस्कान के लिए सौ-सौ दुख सहे, जिसने अपना रक्त पिला-पिलाकर तुम्हें पाला ताकि···ताकि जब तुम बड़ी हो जाओ तो नोंच लो उसका कलेजा और उसे संसार में किसी को मुंह दिखाने के काबिल न छोड़ो।" इतना कहकर शेखर फूट-फूटकर रोने लगा।

"भैया···भैया···।" सुधा सिसकती हुई बोली—"मुझे क्षमा

कर दो भैया…।"

० ० ०

सेठ केदारनाथ ने एक लम्बा कहकहा लगाकर अपनी रान प हाथ मारा—फिर बोले—"बहुत खूब…बहुत खूब लाला शान्ति प्रसाद जी…बहुत खूब…वर छीन लेने का सर्वोत्तम उपाय ढूं निकाला है आपने—आहा…हा…हा हल्दी लगे न फिटकरी र चोखा ही चोखा…परन्तु…।" अचानक वह उछलकर खड़े हो ग और गुर्राए हुए स्वर में बोले—"इन तिलों में तेल नहीं है शान्ति प्रसाद जी।"

"सेठ केदारनाथ…!" शान्तिप्रसाद का मुंह आश्चर्य से खुले क खुला रह गया।

"अब किसी और घर जाओ तो कोई नई और कहानी घड़क जाना…।"

"मैं सच बोल रहा हूं।"

"तुम सच बोल रहे हो तुम्हारे पास इस बात का क्या सबू है।"

"इस बात का सबूत मेरी बेटी सुधा है जिसके पेट…में आप आनन्द का पाप पनप रहा है।"

"चुप रहो, शान्तिप्रसाद…हर झूठा यही कहा करता है। पूछता हूं तुम्हारी बेटी के साथ कालेज में क्या केवल मेरा बेटा आनन ही पढ़ता है! कालेज में और भी तो जवान लड़के पढ़ते हैं, न जा किसका पाप तुम मेरे लड़के के सिर बांधना चाहते हो…कान खोल कर सुन लो शान्तिप्रसाद अगर तुमने चट्टान से टकराने की कोशि की तो चट्टान का कुछ नहीं बिगड़ेगा—लेकिन चट्टान से टकरा वाला स्वयं ही बरबाद हो जाएगा।"

"आनन्द को बुलाकर पूछ लीजिए।"

"कोई आवश्यकता नहीं…मेरा आनन्द शरीफ लड़का है औ मैं जानता हूं कि वह कदापि ऐसा नहीं कर सकता।"

"और उसी शरीफ लड़के ने मेरी इज्जत पर हाथ डाल दि है। उसके पाप की निशानी मेरी बेटी की कोख में पल-पलकर उस

शराफत की कहानियां सुना रही है। उसकी वासना ने मेरे पुरखों की बनाई हुई इज्ज़त की इमारत की नींव को भी हिला डाला है··· उसने शान्तिप्रसाद को विवश कर दिया है कि यह एक मजबूर और बेबस बाप बनकर आपसे भीख मांगने आए···अपनी इज्जत की भीख···।"

"यह सब बकवास है···चांद पर खाक उड़ाने का प्रयत्न मत करो···मैं कभी नहीं मान सकता कि मेरा बेटा ऐसा कर सकता है।"

"आप उसे बुलाइए तो सही···उसकी झुकी हुई निगाहें चीख-चीख कर आपको उसके पाप की कहानी सुना देंगी···उसके मन का चोर आपको बता देगा कि उसने कितना बड़ा अपराध किया है··· भगवान के लिए मेरी सुन लीजिए सेठजी।"

"मैं कुछ नहीं सुनना चाहता···आप जा सकते हैं।"

"नहीं···!" शान्तिप्रसाद ने चीखकर कहा। फिर बिलख-बिलखकर रोते हुए कहा—"इतने कठोर न बनिए सेठ केदारनाथ ···आपकी भी एक लड़की है। एक जवान लड़की के बाप को दूसरे बाप की मजबूरियों का ख्याल करना चाहिए।"

"और ख्याल करके मैं आनन्द का जीवन बरबाद कर दूं, उसके लिए दस-दस लाख के दहेज के आफर्स आ चुके हैं शान्तिप्रसाद जी, मैंने उन सबको ठुकरा दिया है। मैं उसे कल ही इंग्लैंड भेज रहा हूं ताकि जब वह वापस आए तो पचास-पचास लाख की आफर्स आएं।"

"जिन्दगियों को व्यापार न बनाइए सेठजी, मैं आपके पैर पड़ता हूं···म···मैं एक अभागिन लड़की का बाप होने के नाते···आपको आपकी लड़की का वास्ता···।"

"मेरी लड़की यदि ऐसा करती तो मैं उसका गला घोंट देता···।"

शान्तिप्रसाद फूट-फूट कर रोने लगे फिर उन्होंने अपनी टोपी सेठ केदारनाथ के पैरों में रखकर कहा—"मेरी लाज अब आपके हाथ में है···उसे बचा लीजिए···आपको···भगवान का वास्ता··· सेठजी मुझे बरबाद होने से बचा लीजिए···"

सेठ केदारनाथ ने टोपी पर ठोकर मारकर कहा—"इसे उठाओ और यहां से निकल जाओ।"

शान्तिप्रसाद ने केदारनाथ के पैर पकड़ लिए और उन पर अपन सर रखकर बिलख-बिलख कर रोते हुए कहा—"भगवान के लि मुझ पर दया कीजिए सेठजी···भगवान के लिए···।"

सेठ केदारनाथ ने शान्तिप्रसाद के ठोकर मारकर दरवाजे प खड़े हुए नौकरों से गुर्राकर कहा—"इसे धक्के देकर बाहर निका दो।"

शान्तिप्रसाद रो-रोकर केदारनाथ से अपनी इज्जत की भी मांगते रहे और नौकर उन्हें घसीट-घसीट कर बाहर ले जाते रहे— अन्ततः नौकरों ने उन्हें फाटक के बाहर फेंक दिया।

० ० ०

सेठ केदारनाथ के घर से निराश होकर वापस लौटते सम शान्तिप्रसाद की हालत वर्षों से बीमार पड़े हुए रोगी जैसी दिखा देने लगी थी। डगमगाते कदमों से किसी हारे हुए जुआरी की तर वह अपने घर में दाखिल हुए—दरवाजा अन्दर से बन्द किया— फिर इस प्रकार दरवाजे से टेक लगाकर खड़े हो गए जैसे उनमें ए पग चलने की शक्ति भी न रही हो—जैसे किसी ने उनके शरीर रक्त की आखिरी बूंद भी निचोड़ ली हो—काफी देर तक वह दर वाजे से टेक लगाए खड़े रहे। फिर अचानक उन पर पागलपन-स छा गया और वह अपनी पत्नी के कमरे की ओर चल पड़े। ए झटके के साथ दरवाजा खोलकर वह अन्दर दाखिल हुए। उनर्क पत्नी वहां उपस्थित नहीं थी।

"सुधा की मां···!" वह पागलों की भांति चिल्लाए···जब को उत्तर नहीं मिला तो वह हल्का-सा कहकहा लगाकर बोले—"कह हो डायन···जिस जहरीली नागिन को तुमने जन्म दिया था, उसवे कुकर्म तो सुन लो···छुप गई···सुधा की मां···सुधा की मां···!" वह पागलों की भांति चिल्लाते रहे।

जब कोई उत्तर नहीं आया तो उन्होंने फिर एक भयानक अट्टहा किया और बोले—"हां···सुन कैसे सकती हो···सुनने के लिए पत्थर का कलेजा चाहिए···गज भर की छाती हो तो वह भी फट जाए— ऐसे हैं कुकर्म तुम्हारी लड़की के···।"

इस पर कोई भी उत्तर नहीं मिला तो वह— सुधा की मां—सुधा की मां चिल्लाते हुए पागलों की तरह पूरे घर में उसे ढूंढ़ने लगे। ढूंढ़ते-ढूंढ़ते जब वह सुधा के कमरे में दाखिल हुए तो जैसे उन्हें बिजली का करेन्ट छू गया, एकदम उनकी आंखें ऐसी फटीं जैसे उबल कर बाहर आ जाएंगी।

ऊपर छत के हुक से लटकी हुई सुधा की लाश तेज़ हवा के कारण आगे-पीछे झूल रही थी और दरवाज़े के सामने वाली दीवार से टेक लगाए उनकी धर्मपत्नी बैठी, अपनी बेटी की झूलती हुई लाश को लगातार घूरे जा रही थी।

"सुधा की मां···!" शान्तिप्रसाद पागलों की भांति उसकी ओर झपटे और जब उन्होंने उसे छुआ तो उनकी पत्नी धड़ाम से फर्श पर लुढ़क गई। उसी क्षण उन्हें एहसास हुआ कि जो चीज़ फर्श पर लुढ़की है वह उनकी पत्नी नहीं, बल्कि पत्नी की लाश है—ठंडी लाश···उसके दुर्बल चेहरे पर आंसुओं के सूखे हुए चिह्न अब तक विद्यमान थे तथा फर्श पर लुढ़क जाने के बावजूद भी उसकी आंखें अपनी बेटी की लाश को तक रही थीं क्योंकि वह एक मां थी···एक अबला मां···लाश में परिवर्तित हो जाने के बाद भी ममता की मारी···एक दुखिया मां···जिसका रोम-रोम पश्चाताप के बोझ तले दबा जा रहा था, एक मां जिसे लज्जित होना पड़ा था अपनी कोख से···।

शान्तिप्रसाद पर सन्नाटा-सा छा गया—उन्होंने दोनों हथेलियां धरती पर टेक दीं।

बाहर शान्ति भवन के चेहरे पर मानो सन्नाटा-सा छाया हुआ था लगता था जैसे वह अपने लगातार मुस्कराते रहने पर पछता रहा हो।

° ° °

अब वहां केवल राख थी थोड़ी देर पहले जहां सुधा और उसकी मां के शरीर रखे गए थे— राख—गर्म-गर्म राख—इर्द-गिर्द शमशान घाट के भयानक अंधेरे थे और गर्म-गर्म राख को पागलों की तरह अपनी उंगलियों से कुरेदने वाला शान्तिप्रसाद सिसक रहा था—रो रहा था और कभी-कभी भयानक मुद्रा में मुस्करा भी रहा था।

कितना अभागा था वह···कितना अरमान था उसे अपनी सुधा कं डोली उठाने का लेकिन वक्त ने कैसी भयानक करवट ली थी। डोलं के वजाए उसे अर्थी उठानी पड़ी थी···कितने अरमान थे उनके·· सबके सब चिता के साथ जलकर भस्म हो गए थे।

वहां एक और छाया भी थी और वह था शेखर।

अचानक शान्तिप्रसाद ने चीखकर कहा—"मैं वदला लूंगा·· बदला हां···मैं बदला लूंगा।"

o o o

पैरों की एक भरपूर ठोकर मारकर एक झटके के साथ दरवाज खोल देने के बाद शेखर अन्दर दाखिल हुआ। कमरे में मद्धिम रोशनी वाला नाईट वल्व जल रहा था। जिसकी धीमी-धीमी रोशनं में शेखर के चेहरे पर गुस्से के भाव नज़र आ रहे थे। उसके हों सख्ती से भिचे हुए थे, उसकी निगाहें उधर जमीं हुईं थीं जहां पलं पर कोई लेटा हुआ था। लेटने वाला दरवाजा खुलने की आवाज़ सुनकर उछला था लेकिन उसे शेखर का चेहरा नज़र नहीं आय था, क्योंकि जिस तरफ शेखर खड़ा था, उस तरफ गहन अंधका था।

शेखर ने पतलून की जेब में हाथ डालकर रिवाल्वर वाह निकाला और पलंग की तरफ वढ़ता हुआ गुर्राया—"आराम कं नींद बहुत सो चुके आनन्द—अब उठ जाओ—ताकि मैं तुम्हें हमेशा हमेशा के लिए कभी न टूटने वाली नींद सुला दूं ?"

अचानक बैड स्विच के दवाने की आवाज़ सुनाई दी फिर प्रका फैलता चला गया—शायद पलंग पर लेटने वाले ने बैड स्विच ं द्वारा दूसरी वत्ती जला दी थी। पलंग पर लेटने वाला आनन्द नहं था वल्कि वह एक सुन्दर युवती थी। जो भयभीत मुद्रा में दोनों हाथं से लिहाफ थामे शेखर को देख रही थी। उसके सुर्ख सफेद चेह और वादाम की सी रंगत वाली आंखों में जो भय था, उसके कार वह किसी सहमी हुई हिरनी की तरह नज़र आ रही थी। अखरो के रंग वाले उसके लम्बे-लम्बे वाल कन्धों पर लहरा रहे थे और उ पर स्तब्धता-सी छा गई थी।

उसे देखकर शेखर के नेत्र आश्चर्य से फैल गए वह बोला—"श···शीला तुम ?"

शीला झुरझुरी-सी लेकर रह गई। फिर गहरी सांस लेकर बोली—"हां···मैं !"

"लेकिन यह तो आनन्द का कमरा है।"

"कल तक था !" शीला ने सहमे से स्वर में कहा।

"क्या मतलब !" शेखर ने गुर्राहटपूर्ण स्वर में पूछा।

"भइया, आज सुबह के प्लेन से इंग्लैंड के लिए रवाना हो गए।"

"न···नहीं !" शेखर ने अविश्वासपूर्ण स्वर में कहा।

शीला ने अब तक अपने भय पर काबू पा लिया था। वह निगाहें झुकाकर बोली—"यह सच है शेखर।"

शेखर गुस्से की अधिकता से दांत पीसने लगा।

"तुम्हारे हाथ में रिवाल्वर ?" शीला ने प्रश्नपूर्ण स्वर में कहा।

"हां !" शेखर गुर्राया—"मैं उसे मौत की नींद सुलाने आया था।"

"और अब···?"

"अब···!" शेखर ने दांत पीसे—"जब कि वह कायर भाग चुका है···मैं मैं···अपनी बदले की आग किस प्रकार बुझाऊंगा।"

शीला ने दुख प्रकट करते हुए कहा—"मुझे सब कुछ मालूम हो चुका है···भैया के कमीनेपन पर मुझे अफसोस है।"

"केवल अफसोस !" शेखर ने व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा।

"इसके अतिरिक्त मैं और क्या कर सकती हूं।"

"तुम···तुम···तुम बहुत कुछ कर सकती हो।" शेखर गुर्राया—"जैसे-जैसे तुम उसकी जगह मर सकती हो—उसकी बजाए मैं तुम्हारे रक्त से अपनी बदले की आग को बुझा सकता हूं।"

"शेखर !" शीला धीरे से चिल्लाई।

"शोर मचाना बेकार है···जो भी तुम्हारी सहायता के लिए आएगा मैं उसे भी गहरी···बहुत गहरी नींद सुला दूंगा···मैं तुम्हारे खून से होली खेलूंगा ताकि आनन्द को पता तो चले कि बहन की मौत का दुख क्या होता है।"

"शेखर तुम पागल हो चुके हो···क्या···तुम मेरी हत्या करोगे तुम तो मुझसे प्रेम करते हो।"

"करता था लेकिन अब नहीं।"

"शेखर···!"

"हां···हां मैं तुमसे प्रेम करता था परन्तु मैंने तुम्हारे साथ कभी विश्वासघात नहीं किया···क्योंकि मेरी नसों में शरीफ खून दौड़ रहा है। यह सत्य है कि मैंने तुमसे अथाह प्रेम किया था परन्तु आज ही — मैं अपने उस प्रेम को दो चिताओं के साथ जला आया हूं···अब मैं तुमसे घृणा करता हूं···सख्त नफरत है मुझे तुमसे···और अब तुमसे बदला लेकर ही मुझे शान्ति मिल सकती है।"

शीला ने तुरन्त कहा—"यदि भैया के अपराधों की सज़ा मुझे देकर तुम्हें शान्ति मिल सकती है तो चलाओ गोली···मैं हंसते-हंसते यह सज़ा भोगने को तैयार हूं।" इतना कहकर शीला शेखर के सामने सीना तानकर खड़ी हो गई।

शेखर का रिवाल्वर वाला हाथ ऊपर उठा।

"चलाओ गोली···!" शीला ने आंखें बन्द करके कहा—"मैं खुद भी मर जाना चाहती हूं—मैं भूल जाना चाहती हूं कि भैया ने दरिन्दों से भी ज्यादा घृणित कार्य किया है—मैं भुला देना चाहती हूं कि मैं एक मनुष्य की नहीं, बल्कि एक पशु की बहन हूं। मैं कदापि यह सहन नहीं कर सकती कि जब भी मैं अपने इकलौते भाई को याद करूं तो मेरी आंखों के सामने दो चिताएं घूमने लगें।"

शीला का पश्चाताप से भरा स्वर सुनकर शेखर का हाथ कंप-कंपाने लगा।

"गोली चलाओ शेखर—इतने बड़े सदमे का इलाज मौत ही हो सकता है। तुम्हें मुझसे नफरत है ना—मैंने तुम्हारा प्रेम देखा है, आज अपनी घृणा भी दिखा दो शेखर— तुम्हें मेरे प्यार का वास्ता।" इतना कहकर शीला फूट-फूटकर रोने लगी।

शेखर का रिवाल्वर वाला हाथ नीचे झुकता चला गया···कुछ क्षणों तक वह सख्ती से होंठ भींचे शीला को देखता रहा फिर बोला— "यदि तुम्हारी अन्तरात्मा तुमसे तुम्हारी शान्ति छीन रही है। यदि तुम्हें अपने भाई के कुकर्मों पर लाज आ रही है तो इससे बड़ा बदला

और क्या होगा। मैं तुम्हें खत्म करके चैन की गहरी नींद सोने का अवसर नहीं दूंगा, मैं चाहूंगा कि तुम सारे जीवन इसी प्रकार शान्ति-शान्ति पुकारती रहो और तुम्हें कभी शान्ति न मिले तुम हर समय तड़पती रहो।"

"गोली चलाओ शेखर! भगवान के लिए गोली चलाओ...मैं दौड़ कर जाना चाहती हूं, मैं भूल जाना चाहती हूं कि मैं एक ऐसे इन्सान की बहन हूं जो इंसान के रूप में भेड़िया था।"

"नहीं!" शेखर गुर्राया।

शीला फूट-फूटकर रोती रही।

अचानक शेखर के मस्तिष्क में एक विचार आया—उसने सोचा क्यों न आनन्द से बदला लेने के लिए वही नाटक रचाया जाए जो आनन्द ने सुधा के साथ रचाया था। इस विचार के आते ही उसकी आंखें भयानक रूप से चमकने लगीं। यह हकीकत थी कि शीला उससे और वह शीला से दीवानों की तरह प्रेम करता था। कालिज में वह शीला के साथ-साथ पढ़ा करता था जबकि सुधा आनन्द की सहपाठी रह चुकी थी। शीला के साथ उसका प्रेम काफी पुराना था परन्तु यह भी सत्य था कि अपनी बहन और मां की चिताओं को जलते देखकर वह प्रेम घृणा में परिवर्तित हो चुका था। उसे आनंद से घृणा थी और आनन्द के साथ-साथ उसे प्रत्येक उस वस्तु से भी नफरत थी जिसका सम्बन्ध आनन्द से था। यहां तक कि शीला से भी—अब उसके मस्तिष्क में केवल एक विचार था—बदला—बदला—!

और बदला लेने का यह सर्वोत्तम उपाय था कि शीला से झूठे प्रेम का नाटक रचाया जाए—धीरे-धीरे उसे विश्वास दिलाया जाए कि वह अपनी मां और बहन का गम भूल गया है। फिर...फिर...वह भी शीला को बहला-फुसलाकर पाप की उस घाटी में ले जाए जहां से वापसी पर स्त्री गर्भवती हो जाती है और फिर उस बदनामी के डर से उसे आत्महत्या कर लेनी पड़ती है इस प्रकार कि तेज हवा के चलने से उसकी लाश आगे-पीछे झूलती रहे।

एक चालाक शिकारी की भांति उसने अपने शिकार को जांचा परखा—और उसे यकीन आ गया कि शिकार ज़रूर जाल में फंस

जाएगा—शीला गम और अफसोस की मूर्ति बनी खड़ी थी। उसके चेहरे पर फैले हुए भावों को देखकर प्रगट होता था कि जो कुछ भी हुआ था, उसके लिए उसे बहुत अफसोस है और वह लज्जित है। वह अपने भाई के कुकर्म पर फूट-फूटकर रो रही थी। यह बात निश्चित थी कि उन आंसुओं के स्रोत मन की गहराइयों से फूटे थे।

शेखर के सुन्दर मुखड़े पर पैशाचिक चमक फैल गई। उसने सोचा जब यह गर्भवती हो जाएगी तो सेठ केदारनाथ पिताजी के पास आएंगे—उनके पैरों पर सर रखकर अपनी इज्जत की भीख मागेंगे और—और—तब—!

उसने रिवाल्वर जेब में रख लिया और धीरे-धीरे चलता हुआ शीला तक पहुंचा—फिर उसे पागलों की तरह अपने वक्ष से लगाकर सिसकने लगा—यह सिसकियां पूर्णतया बनावटी थीं।

° ° °

सागर की लहरें इस समय शान्त होती जा रही थीं। जब वह तट की तरफ आतीं तो थकी-थकी-सी नज़र आतीं। फिर तट तक आते-आते दम तोड़ देतीं। दूर आकाश पर उड़ने वाले पंछी अपने-अपने घोंसलों की ओर उड़ान कर रहे थे तथा पश्चिम में सूर्यास्त हो रहा था और दूर-दूर तक आकाश में लाली-सी छाई हुई थी। तट पर दूर-दूर तक रेत फैला हुआ था। उस रेत पर कहीं-कहीं छोटे-छोटे घरौंदे बने हुए थे। कुछ घरौंदे पूरे बने हुए थे और कुछ अधूरे थे। कुछ ऐसे भी घरौंदों थे, जिन्हें तोड़ दिया गया था। रेत के उन छोटे-छोटे घरौंदे को न जाने किस-किसने बनाया था और न जाने किन-किन अरमानों से बनाया था।

ऐसा ही एक छोटा-सा घरौंदा शीला बना रही थी। वह पिछले एक घण्टे से उस घरौंदे को बनाने में व्यस्त थी और अब वह लगभग तैयार हो चुका था। पास ही रेत पर करवट लिए लेटा हुआ शेखर उस घरौंदे को देखता हुआ अपने विचारों में खोया हुआ था।

शीला ने बड़े प्यार से घरौंदे पर हाथ फेर कर शेखर को सम्बोधित करते हुए कहा—"ए जी!"

शेखर अपने विचारों में खोया रहा।

शीला ने आश्चर्य से उसे देखा—फिर उसके कान के निकट अपना मुंह ले जाकर जोर से बोली—"ए शेखर जी !"

"आं···हां।" शेखर उछल पड़ा। उसके मन में उठ रहे विचारों की धारा टूट गई।

"यह तुम कहां खो जाते हो जी ?"

"क-कहीं भी नहीं।" शेखर ने बौखलाए-से स्वर में कहा।

"कुछ तो सोच रहे थे।"

"सोच रहा था···हां।" उसने जल्दी से बात बनाई—"सोच रहा था कि घरौंदे कितने अरमानों से बनाए जाते हैं।"

"और···।"

"और सोच रहा था कि···तुम पागल हो···तुमने अकारण एक घण्टा इस रेत के घरौंदे पर नष्ट किया है। जिसे कोई न कोई आज नहीं तो कल आखिर तोड़ ही डालेगा।"

शीला ने जल्दी से शेखर के होंठों पर हाथ रख कर विनय-पूर्ण मुद्रा में कहा—"ऐसा न कहो शेखर।"

"क्यों ?"

"इसे कितने अरमानों से बनाया है मैंने···देखो कितना अच्छा बना है यह और मालूम है कि यहां इसके द्वार पर मैं तुम्हारी माचिस की तीली से क्या लिखूंगी ?"

"क्या लिखोगी ?"

"शेखर भवन।"

"हूं, और फिर हम इस पर एशियन पेन्ट भी करवाएंगे··· कारपेट आदि भी बिछवाएंगे इसमें···ए लड़की···आखिर तुझे अक्ल कब आएगी···"

"शेखर !" शीला ठिनकने लगी।

"बुद्धि से काम लो···आखिर यह घरौंदा टूट ही जाएगा··· सामने एक टूटा हुआ घरौंदा है कभी यह भी कितना सुन्दर रहा होगा···परन्तु अब वह केवल रेत का एक ढेर नजर आ रहा है।"

"तुम्हें तो हर समय मज़ाक की सूझती रहती है।"

"यह मज़ाक है ?" शेखर ने प्रश्न पूर्ण स्वर में कहा।

"और क्या ?" शीला ने ठिनकते हुए कहा।

"क्या यह घरौंदा कभी टूटेगा नहीं ?"

"फिर बुरी बात मुंह से निकाली।"

"अच्छा बाबा यह कभी नहीं टूटेगा —लिखित रूप में दे दूं!"

"फिर मज़ाक !"

"कमाल है, न इधर चैन न उधर चैन।"

"एक बात पूछूं, बताओगे ?"

"अवश्य।"

"मैंने एक और घरौंदा बना रखा है—बिल्कुल ऐसा ही।"

"कहां ? क्या कोई प्लाट खरीद लिया था ?"

"फिर मज़ाक।"

"धत् तेरे की।"

"प्लीज शेखर।"

"अच्छा बोलो।"

"एक घरौंदा बिल्कुल ऐसा ही।" शीला की आवाज़ स्वप्निल हो उठी—"स्वप्नों ही स्वप्नों में मैंने तैयार कर रखा है। क्या वह भी टूट जाएगा ?"

शेखर आश्चर्य से उसे देखता रह गया।

"बोलो शेखर !"

"न···नहीं शीला कभी नहीं।"

"मैंने उसका नाम शेखर भवन रखा है···उसमें मैं रहती हूं··· तुम रहते हो और···और···।" इतना कहकर शीला लजा गई।

"और···?"

"हम नहीं बताते···!" शीला ने लजाते हुए कहा।

"क्यों ?"

"हमें शर्म आती है।"

"अरे बताओ ना ?"

शीला शेखर की गोद में अपना मुंह छुपा कर बोली—"और उसमें शेखर जूनियर रहता है···नन्हा-सा···बिल्कुल तुम्हारे जैसा ···वह तुतला-तुतला कर हम दोनों से बातें करता है··शरारतें करता है।"

शेखर ने कुछ कहा नहीं। वह शीला की पीठ पर हाथ फेरता

रहा।

"शेखर!"

"हूं।"

"वह घरौंदा टूटेगा तो नहीं!"

"इसका उत्तर तो तुम्हारे पास होगा।"

"कैसे?"

"क्या तुम्हारे डैडी हम दोनों की शादी पर राजी हो जाएंगे?"

"मैं उन्हें किसी तरह भी राजी कर लूंगी।" शीला ने कहा—"मगर तुम्हारे पिताजी?"

"पिताजी।" शेखर ने गहरी सांस ली—"मुश्किल ही है। तुम्हें मालूम है कि उनके और तुम्हारे पापा के सम्बन्ध कितने पुराने थे। परन्तु इसके बावजूद उन्होंने मेरे पिताजी का जो अपमान किया···क्या उसे कोई सहन कर सकता है? फिर भी मैं पिताजी को जानता हूं···वह दिल के बुरे नहीं हैं। अन्ततः हमारी खुशी के लिए वह राजी हो जाएंगे।"

"तुम्हें यकीन है?"

"बिल्कुल।"

"और अगर वह न माने?"

"यह असम्भव है···खतरा तो मुझे तुम्हारे पापा की तरफ से है।"

"मैं उन्हें राजी कर लूंगी।"

"और अगर वह न माने तो?" शेखर ने प्रश्नात्मक नजरों से शीला को घूरते हुए कहा।

"मैं तुम्हारे साथ कोर्ट मैरेज कर लूंगी।"

"इतना आगे जा सकोगी तुम?"

"इससे भी आगे···तुम्हें प्राप्त करने के लिए जिन्दगी की सीमा पार करके यदि मौत की सरहदों में भी दाखिल होना पड़ा तो शीला के कदम रुकेंगे नहीं शेखर···वह बढ़ते ही रहेंगे।"

"परन्तु मैं कोर्ट मैरेज के पक्ष में नही हूं।"

"तो फिर पापा को मेरी बात माननी पड़ेगी।"

"वह नहीं मानेंगे क्योंकि वह तुम्हारी शादी डा० दीपक से

करना चाहते हैं।"

"तुमने फिर दीपक का नाम लिया मेरे सामने !"

"नाम लेने से क्या होता है ?"

"मैंने तुमसे कितनी बार कहा है कि उसका नाम मेरे सामने मत लिया करो, मगर···मगर···।"

शेखर मुस्कराने लगा—फिर बोला—"मगर उसमें बुराई क्या है, जवान है, सुन्दर है, माना हुआ डाक्टर है। इतनी छोटी-सी आयु में इतनी ख्याति आज तक शायद ही किसी डाक्टर को प्राप्त हुई हो और फिर वह तुमसे दीवानों की तरह मुहब्बत भी तो करता है।"

"देखो शेखर अब मैं रो पड़ूंगी।"

"नहीं शीला।" शेखर ने एक गहरी सांस ली—"कभी-कभी सोचता हूं कि दीपक हर मामले में मुझसे आगे है। इसके बावजूद तुम मुझसे प्रेम क्यों करती हो···जबकि···जबकि···।"

"वह तुमसे ज्यादा सुन्दर है···हाएं···तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। दृष्टि दीपक की नहीं···तुम्हारी कमजोर है, नजर की ऐनक तुम्हें लगानी चाहिए, जबकि मोटे-मोटे शीशों वाली ऐनक वह लगाए रहता है···वह अन्धा।"

"उसकी निगाह कमजोर सही, मगर मैं यह कहूंगा कि उसकी आंखों पर चढ़ी हुई ऐनक उसके व्यक्तित्व को सम्मानित बनाती है। कितनी गम्भीरता नजर आती है उस पर।"

"अब मैं जोर-जोर से रोने लगूंगी।"

"मुझे कहने दो शीला कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है जैसे यह सब कुछ धोखा हो। जैसे तुम्हें मुझसे प्रेम न हो···जैसे···।"

"शेखर !"

"हां शीला···यह मन के किसी कोने में छुपी बात है जो आज होंठों तक आ गई है।"

"सुनो।" शीला तन कर बोली—"यदि किसी ने मुझे अलग करने की चेष्टा की या मुझे किसी और के पल्ले बांधने का प्रयत्न किया तो वह शीला के जीवन का अन्तिम और आखिरी दिन होगा।"

शेखर ध्यानपूर्वक उसका मुखड़ा देखता रहा।

एक लहर बहुत जोर से तट की श्रोर श्राकर शोर मचाने लगी थी। शीला ने पलटकर उस लहर को देखा फिर बोली—"शेखर?"

"हूं।"

"तुमने इस लहर को देखा।"

"हां।"

"कितनी दूर से श्राई है श्रौर किस तरह तट पर श्राकर उसने श्रपने श्रापको तट के हवाले कर दिया है।"

"हूं।"

"हो सकता है तट को श्रब तक उसकी मुहब्बत श्रौर बलिदान पर यकीन न श्राया हो, कितना निर्दयी है तट—स्वयं श्रागे नहीं बढ़ता, लहर दूर से उसके पास श्राती है, इसके बावजूद वह ··।"

"तुम कहना क्या चाहती हो?"

"समझ लो कि मैं वही लहर हूं। तुम मेरे पास न श्राश्रो मगर मैं तुम्हारे पास श्राती रहूंगी। इसी प्रकार हमेशा श्रौर हर जन्म में मैं तुम्हारे पास श्राती रहूंगी। इसी तरह उस समय तक तुम्हारे पास श्रा-श्राकर श्रपना सर पटकती रहूंगी जब तक कि तुम मुझे श्रपना नहीं लोगे···।"

शेखर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिगरेट सुलगाने लगा फिर सिगरेट का धुंश्रा शीला के चेहरे पर छोड़कर बोला—"श्राश्रो चलें! बहुत देर हो गई।"

इतना कहकर वह खड़ा हो गया। उसने सहारा देकर शीला को उठाया फिर श्रपना कोट पहनने लगा। इस काम से निपटकर उसने शीला का हाथ पकड़ा श्रौर उसे श्रपने स्कूटर की तरफ ले जाने लगा श्रभी उसने एक कदम बढ़ाया था कि उसका पैर किसी चीज से टकराया। उसने नीचे देखा श्रौर चौंक पड़ा।

शीला का बनाया हुश्रा रेत का घरौंदा उसका पैर लगने की वजह से टूट चुका था। उसे शीला ने भी देख लिया था श्रौर वह धक् से रह गई थी। सहसा उसका चेहरा किसी श्रज्ञात भय से कांप उठा श्रौर नयनों में श्रांसू नजर श्राने लगे। उसने भर्राये स्वर में कहा।

"शेखर···श्राखिर तुमने वह घरौंदा तोड़ ही दिया ना!"

"तोड़ा नहीं···टूट गया।"

शीला भर्राई आवाज में बोली—"कहीं इसी तरह वह घरौंदा भी तो नहीं टूट जाएगा जो मैंने सपनों ही सपनों में अपने दिल में बना रखा है···।"

शेखर उसे अपने आलिंगन में लिपटाकर जल्दी से बोला—"कभी नहीं शीला···कभी नहीं···ऐसा कभी नहीं हो सकता।"

और जिस समय वह यह बात कह रहा था उसके अधरों पर एक पाशविक मुस्कान नृत्य कर रही थी। आंखों में खून उतर आया था और उन खूनी आंखों से वह दो चिताओं को जलते हुए देख रहा था। उसके कानों के बहुत करीब लकड़ियों के चटखने की आवाजें आ रही थीं। बूढ़े पिता की हिचकियां थीं और फिर राख थी···गर्म-गर्म राख···।

° ° °

जब रात को देर से शेखर घर पहुंचा तो हमेशा की तरह भयानक सन्नाटों ने उसका स्वागत किया। रामू काका व अन्य घरेलू नौकर अपना-अपना काम करके जा चुके थे और अब सन्नाटा इतना ही गहरा था जितना शमशान घाट पर हुआ करता है। कितना भयानक था परिस्थितियों का यह परिवर्तन? इस परिवर्तन ने शान्ति भवन को एक शमशान घाट बना दिया था और शान्तिप्रसाद की हैसियत शमशान घाट के चौकीदार जैसी होकर रह गई थी।

क्षण-भर के लिए शेखर रुक गया। आंसुओं से भरी उसकी आंखें बेचैनी से वहां एक बूढ़ी, कमजोर तथा रोगग्रस्त मां को खोजने लगीं फिर उन आंखों ने युवा बहन को खोजना आरम्भ किया। परन्तु कौन था वहां जो आगे बढ़कर उसके आंसुओं को पोंछता!

वह थके-थके कदमों से अपने कमरे की ओर चल पड़ा। कमरे में दाखिल होकर उसने बत्ती जलाई और उछल पड़ा।

"प···पिताजी आप?"

शान्तिप्रसाद ईजी चेयर पर लेटे थे।

"पि···पिताजी···!"

शान्तिप्रसाद कुछ क्षणों तक शेखर को देखते रहे फिर पूछने लगे—"खाना खाया!"

"ज···जी अभी नहीं—पिताजी।"

"खाओगे?"

"भ···भूख नहीं है पिताजी।"

शान्तिप्रसाद खड़े हो गए और शेखर की ओर पीठ करके पूछने लगे—"क्यों?"

"मन नहीं करता।"

"मन तो मेरा भी नहीं करता। परन्तु जीवित शव घसीटना जो ठहरा।"

"पिताजी!"

"मैंने कल से कुछ नहीं खाया है। सोचता था कि तुम आओगे तो तुम्हारे साथ थोड़ा बहुत खा लूंगा। ताकि जीने का फर्ज पूरा कर सकूं। परन्तु अब यदि तुम्हारा मन नहीं करता तो···।"

"मैं अभी खाना गर्म करके लाता हूं पिताजी!"

"ठहरो।"

शेखर ठिठक पड़ा।

"तुम कल रात भी देर से आए थे?"

"ज···जी।"

"मैं कल रात भी तुम्हारे इन्तजार में भूखा रहा था···आखिर झक मार कर सो गया था। आज दिनभर मैंने क्रोधवश खाना नहीं खाया। मुझे तुम पर क्रोध था। अब तुम आए तो अब भी तुम्हारा मन खाने को नहीं करता आखिर बात क्या है?"

"वह···वह···।"

"मैं भी कभी जवान था···मैं भी कभी सागर तट पर घूमा करता था परन्तु उन दिनों मुझे बहुत भूख लगा करती थी।"

"प···पिताजी।"

"क्या रेत या रेत के घरौंदों से भी पेट भर जाया करता है?"

शेखर के नेत्र आश्चर्य से फटे के फटे रह गए।

"दूध का जला छाछ को भी फूंक-फूंक कर पीता है शेखर बेटा, मुझे सब कुछ मालूम हो चुका है···यह भी कि वहां दूर-दूर तक फैली हुई रेत का कुछ भाग लेकर एक घरौंदा बनाया गया था···मुझे इस घरौंदे से कोई दुश्मनी नहीं···भगवान करे वह घरौंदा हमेशा बना

रहे। मगर मेरे एक प्रश्न का उत्तर दे सकोगे ?"

शेखर ने अपराधियों की भांति सर झुका रखा था।

"वह घरौंदा।" शान्तिप्रसाद शेखर की ओर मुड़े—"जिसे जिन्दगी की कड़ी धूप झेलकर खून पसीना बहा-बहाकर मैंने बनाया था जिसमें कहकहे गूंजते थे ··जहां हर समय जीवन मुस्कराता था। उस घरौंदे को एक भयानक खंडहर में किसने बदल दिया और क्यों बदला ?"

"प···पिताजी !"

"आज मुझे बोलने दो···आज मुझे कहने दो कि तुमने, हां तुमने उस घराने को मुहब्बत दी है जिस घराने ने तुम्हारे बाप के घरौंदे के विनाश की कहानी पूरी की है। तुम उन निर्दयी हाथों को चूम रहे हो जिन हाथों पर तुम्हारी मां और बहन का खून अब तक चमक रहा है, खून में डूबे उन हाथों को तुम अन्धा-धुन्ध प्यार कर रहे हो, तुम चाहते हो कि उन पैरों पर झुक कर आशीर्वाद लो जिन पैरों ने ठोकरें मार-मारकर तुम्हारे बूढ़े बाप को अपने घर से निकाल दिया था।"

"पिताजी, आप मुझे गलत समझ रहे हैं।"

"हां, मैं तुम्हें गलत समझ रहा हूं, इसलिए कि मैं पागल हो चुका हूं···वृद्धावस्था में वुद्धि मारी गई है मेरी और ठीक ही है, मुझे क्या अधिकार है कि उन सपनों के लिए रोऊं जो मैंने जागती आंखों से देखे थे। मेरे गले पर छुरी रखकर मुझे काटा जाता रहे। मगर क्या अधिकार मुझे कि मैं चीखूं-चिल्लाऊं···ठीक है बेटा, मां-बाप सैकड़ों हजारों रातें आंखों में काट-काटकर इसीलिए तो सन्तान को पालते हैं, दोष तो मेरा है। क्यों सपने देखे थे मैंने कि सुधा की शादी हो। इस घर से उसकी डोली जाए···उसके खूबसूरत बच्चे हों और वह उन्हें लेकर मेरे पास आए। वह नन्हें-नन्हें बच्चे मुझसे खेलें मेरी मूंछें नोंचें और मैं खिलखिलाकर हंसूं···मैंने क्यों देखे थे ऐसे सपने जबकि भाग्य ने लिख दिया था कि इस घर से सुधा की डोली नहीं उसकी अर्थी जाएगी, तुम···तुम अपनों की लाश भूल सकते हो लेकिन मुहब्बत का मारा यह बाप···यह बूढ़ा बाप अपनी जवान और निर्दोष बेटी की लाश कैसे भूल सकता है ?"

शेखर की आंखों से टप-टप आंसू बहने लगे। उसने भर्राई हुई आवाज में कहा—"मां की चिता की सौगन्ध खाकर कहता हूं पिताजी कि मुझे शीला से नफरत है, मुझे आनन्द और आनन्द की एक-एक चीज़ से नफरत है, और···और सागर तट पर जो घरौंदे बनाए जा रहे हैं वह सब एक नाटक है पिताजी···एक भयानक नाटक। उन घरौंदों को टूटना है, उन्हें पूर्ण निर्दयता के साथ मैं स्वयं तोड़ूंगा। मैं वचन देता हूं कि पिताजी कि उस समय तक संसार के सुख व ऐश्वर्य मुझ पर हराम हैं जब तक कि सेठ केदारनाथ अपनी टोपी आपके पैरों में रख कर गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ाकर आपसे अपनी इज्जत की भीख नहीं मांगते···।"

शान्तिप्रसाद आश्चर्य से अपने पुत्र को देखने लगे।

शेखर सर हिला-हिलाकर बोलता रहा—"मुझ पर विश्वास कीजिए पिताजी, यह सब एक नाटक है, एक सोची-समझी स्कीम··· जिस मां ने मुझे जन्म दिया, उसके साथ होने वाले अत्याचारों का बदला लेना ही अब मेरा धर्म बन चुका है। शेखर मरते समय तक यह नहीं भूल सकता कि अपनी जवान बेटी की आत्महत्या का दुख सहन न करके मां ने अपने प्राण त्याग दिए थे। मैं उन आंखों को कभी नहीं भूल सकता···पिताजी, जो आंखे एक मां की थीं और जमी हुई थीं अपनी अभागिन बेटी की आगे-पीछे झूलती हुई लाश पर।"

° ° °

"शीला···ओ शीला देख तो कौन आया है?"

"कौन आया है पापा?"

"स्वयं ही आकर देख ले ना।"

"अभी आई पापा।" इतना कहकर शीला अपने कमरे से चल पड़ी। उसके पापा सेठ केदारनाथ की आवाज विशाल कक्ष रूपी कमरे से आ रही थी जो ड्राईंगरूम के रूप में प्रयोग किया जाता था।

गैलरी में आकर शीला ने आने वाले को देखा। वह नीचे सोफे पर केदारनाथ के सामने बैठा हुआ था, शीला के चेहरे पर नफरत के भाव नजर आने लगे और वह झुंझलाए अन्दाज़ में सीढ़ियां उत-

रने लगी।

"देख तो बेटी, अपना दीपक आया है।" केदारनाथ उसे देखकर बोले—"और एक शुभ समाचार लाया है अपने साथ, इसे उस नर्सिंग होम का मेडिकल सुपरिण्टेण्डेण्ट बना दिया गया है, जहां यह काम करता है।"

"नमस्ते।" शीला ने लट्ठ मारने वाले अन्दाज में दोनों हाथ जोड़कर कहा।

"नमस्ते।" दीपक खड़ा हो गया था। मुस्कराकर उसने भी हाथ जोड़े। वह मुस्करा रहा था, परन्तु ऐनक के मोटे शीशों के पीछे उसकी आंखों में उदासियां फैली हुई थीं।

सेठ केदारनाथ खड़े होकर बोले—"तुम दोनों बातें करो, इतने में मैं दो-चार आवश्यक पत्र लिख आऊं।"

यह कहकर सेठजी अपने कमरे की ओर चले गए।

कमरे में निस्तब्धता छाई रही। कभी-कभी जब दीवार में बने अग्निकुंड में कोई कोयला चटक जाता तो निस्तब्धता भंग हो जाती।

दीपक शीला को देखता रहा—फिर बोला—"बैठिए ना।"

"बैठ जाऊंगी।" शीला लगभग गुर्राई।

"कब।"

"जब जी चाहेगा, आपसे मतलब, क्या नगर में कोतवाल लगे हैं आप?"

"गुस्से में हैं आप···शायद मेरा आना बुरा लगा।"

"मुझे क्यों बुरा लगने लगा?"

"फिर···?"

"यह इर-फिर क्या होती है, क्या मैं आपको इन्टरव्यू दे रही हूं।"

दीपक मुस्कराने लगा, फिर बोला—"अच्छा तो जब आपका मन चाहे बैठ जाइएगा।"

"अभी बैठूंगी···।" शीला सोफे पर ज़ोर से बैठती हुई बोली—"अपनी मरज़ी की मालिक हूं मैं, समझे आप!"

दीपक हंसता हुआ उसके सामने वाले सोफे पर बैठ गया—

और बोला—"बचपन में कोर्स की किताब में पढ़ा था कि अतिथियों के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहिए वह गलत रहा होगा।"

"कहना क्या चाहते हैं आप ?"

"बक रहा हूं जुनूं में क्या-क्या कुछ।
कुछ न समझे खुदा करे कोई॥"

"वाह क्या कहने हैं—कब्रों में मजनूं और फरहाद की आत्माएं तड़प उठी होंगी। वन्स मोर प्लीज।"

"सच है, मज़ाक उड़ाना कोई आपसे सीखे।"

"जी नहीं, आपको गलतफहमी हुई है...मैं भला आपका मज़ाक उड़ाऊंगी...आप ठहरे नगर के सुप्रसिद्ध डाक्टर आंखों के अन्धे...म...म...मेरा मतलब है कि आंखों के कमजोर सही मगर चेहरा कोई खास बुरा नहीं है—पहली नज़र आप पर उठ जाए तो ऐसा लगे जैसे आप कोई ऐसे प्रोफेसर हों जो हज़ारों-लाखों पुस्तकें चाट चुका है...और सितम यह है कि उसने ऊपर से पानी का एक गिलास भी नहीं पिया या यूं कहिए कि चुल्लू-भर पानी भी नहीं पिया...।"

"या यह कह लीजिए...।" दीपक मुस्कराया—"कि चुल्लू-भर पानी में डूब नहीं मरा।"

"अब यह तो आप ही कह सकते हैं।"

कुछ देर तक खामोशी रही—फिर दीपक जेब से सिगरेट का पैकिट निकालकर पूछने लगा—"सिगरेट पी सकता हूं।"

"अगर आप चुरुट भी पिएं तो यकीन मानिए मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।"

दीपक मुस्कराता रहा—फिर बोला—"मेरे पास ऐसे दसों नहीं बल्कि सैकड़ों लखपति और करोड़पति मरीज़ आते हैं जिनके शरीरों पर चरबी की तहें चढ़ी हुई होती हैं। वह दुबला होना चाहते हैं। सोचता हूं अब ऐसे रोगियों को आपकी तरफ भेज दिया करूं...आप उन्हें भिगो-भिगोकर ऐसी सुनाएं कि वह तिलमिला-तिलमिला कर आधे रह जाएं...।"

शीला भी मुस्कराने लगी—फिर बोली—"इसका मतलब है आप बड़े निर्लज्ज हैं।"

"कैसे ?"

"इतने दिन हो गए···आप तो जैसे थे वैसे ही हैं।"

"अपनी हालत तो यह है कि···उनको आता है प्यार पर गुस्सा, हमको गुस्से पे प्यार आता है।"

"रोग काफी पुराना हो चुका है।"

"हां···लगभग ला···इलाज है।

"आप मेरा पीछा क्यों नहीं छोड़ देते!"

"आप मेरी मुहब्बत का मज़ाक उड़ाना क्यों नहीं छोड़ देतीं!"

"शेखर को जानते हैं आप?"

"हां, उस ज़ालिम से मैं परिचित नहीं हूंगा तो और कौन होगा?"

"तो आपने पापा से शिकायत नहीं की?"

"किस बात की?"

"कि मैं शेखर से प्रेम करती हूं।"

"क्या आप मुझे इतना गिरा हुआ आदमी समझती हैं?"

"द···दीपक बाबू!"

"शक्ल जोकरों या चोरों जैसी रही हो—कैरेक्टर थोड़ा-सा ठीक है शायद···।"

"आप मेरा ख्याल छोड़ क्यों नहीं देते।"

"दिल के हाथों मजबूर जो हूं।"

"अक्ल भी कोई चीज़ होती है।"

"दिल के आगे सब कुछ बेकार है, पहले मुहब्बत की बातों को बकवास समझा करता था, सोचता था दिल के दो हिस्से हैं—एरीकल्ज़—वेन्ट्रीकल्ज़ उनका काम खून साफ करना है। परन्तु जब आपको देखा तो पता चला कि उसके हज़ारों भाग हैं। उसका एक और काम है जो सारे कामों पर भारी है और वह काम है किसी को चाहना, और जब यह अपनी ज़िद पर उतर आता है तो शरीर के सारे अंग बेकार होकर रह जाते हैं···।"

"आप पढ़े-लिखे हैं—समझदार हैं—कोशिश कीजिए कि···।"

"मैंने आपसे कभी नहीं कहा कि आप अपने दिल का कहा न मानें।"

"उसे समझाएं।"

"नहीं मानता कम्बख्त।"

"इसका मतलब है कि धीरे-धीरे शेखर के और मेरे बीच एक दीवार उठती जा रही है।"

"यह गलत है।"

"आप चाहे बुद्धि से काम न लें परन्तु मैं सोचती हूं...।"

"शीला...दीपक मर सकता है लेकिन गिर नहीं सकता।"

"कौन जाने कि आप वचन का पालन करेंगे भी या नहीं।" शीला विचार-मग्न मुद्रा में बोली—"कौन जाने कब आपके मन में बुराई आ जाए और आप शेखर को नुकसान पहुंचाने पर तैयार हो जाएं।"

"दीपक का काम प्रकाश फैलाना हुआ करता है शीला, अंधकार देना नहीं, जबकि स्वयं उसके आंचल में अंधेरे होते हैं।" यह कहकर दीपक खड़ा हो गया। उसकी आंखों में आंसू भर आए थे। उन्हें उसने शीला से छुपा लिया और वापसी के लिए चल पड़ा। उसकी आंखों से आंसू टपक-टपककर कालीन पर गिरे और वह उन्हें अपने ही कदमों से रौंदता हुआ तेज़ी के साथ वहां से चला गया।

शीला आश्चर्य-चकित मुद्रा में उसे उस समय तक देखती रही जब तक कि वह नज़र आता रहा।

० ० ०

"नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता...शीला कि दीपक चुपचाप हमारे रास्ते से हट जाए। मेरे ख्याल में वह कोई लम्बी चाल चल रहा है।

"लम्बी चाल!"

"हां।" शेखर मुस्कराया—"जब उसने देखा कि वह इस प्रकार असफल हो रहा है—तो उसने सोचा कि क्यों न एक मीठी चोट लगाई जाए...एक ऐसी चोट जो डायरेक्ट तुम्हारे दिल पर लगे और अन्ततः उसके ज़बानी जमा खर्च अर्थात् नकली त्याग तथा बलिदान से प्रभावित होकर तुम्हारे हृदय में उसके लिए स्थान उत्पन्न हो जाए...और फिर यह भावना धीरे-धीरे प्रेम में परिवर्तित हो जाए।"

शीला के चेहरे पर आश्चर्य के भाव फैल गए। वह बड़बड़ाई—"क्यों ऐसा सम्भव है!"

"संसार में कुछ भी असम्भव नहीं है।"

"परन्तु उसकी बातें।"

"तो इसका मतलब है तुम पर उसका रंग चढ़ने लगा है।"

"शेखर···मुझे गाली मत दो।"

"कभी-कभी सच्चाई गाली बनकर चुभ जाया करती है।"

"तुम मुझे गलत समझ रहे हो।"

"हां, यह ठीक है···मैं सचमुच तुम्हें गलत समझता रहा···मैं समझता था कि शीला नाम है एक चट्टान का जो अपने इरादों में अटल है···मेरा ख्याल था कि···।"

"शेखर···भगवान के लिए मुझे समझने की कोशिश करो···।" शीला ने भर्राई हुई आवाज में कहा।

शेखर ने भर्राई हुई आवाज में कहा—"जिन्दगी एक नाटक है और संसार वह स्टेज है जहां यह नाटक खेला जाता है—हम सब उस नाटक के पात्र हैं और आज···हां आज मुझे पता चला कि उस नाटक में मेरा रोल क्या है—रोना—रोते रहना—लगातार रोते रहना—दुःखों का बोझ उठाते रहना अपने अरमानों की लाशें अपने कन्धों पर उठाए दर-दर शान्ति और प्यार की खोज से भटकना—धोखे खाना और उफ न करना।"

शीला पागलों की तरह शेखर से लिपट कर बोली—"मैं भगवान की सौगन्ध खाकर कहती हूं शेखर कि तुम मुझे गलत समझ रहे हो—स्त्री जीवन में केवल एक पुरुष को चाहती है—उसे ही अपने मन मन्दिर का देवता बनाती है—और मैंने जिसकी पूजा की है—वह तुम और केवल तुम हो—तुम्हारे अलावा किसी और के बारे में सोचना भी मेरे लिए पाप है।"

चूंकि शीला शेखर से लिपटी हुई थी इसलिए उसका चेहरा नहीं देख सकती थी—अगर देख पाती तो उसे पता चलता कि उसके मन मन्दिर के देवता के चेहरे पर एक चतुर षड्यन्त्रकारी मुस्कान फैली हुई है।

"क्या तुम्हें अब भी यकीन नहीं आया शेखर!"

"यकीन तो है मगर···अपने भाग्य से डरता हूं।"

"तुम्हें वह लहर याद है।" शीला की आवाज सोचों में डूब गई। वह लहर जो मचल-मचलकर तट की ओर आ रही थी। इसलिए कि अपना सब कुछ अर्पण कर दे तट को।"

"हूं।"

"तुम्हारी शीला वही लहर है···और लहरें कभी बेवफा नहीं होतीं।"

"इसका उत्तर तो समय ही देगा।"

"हां···समय तुम्हें सब कुछ बता देगा···वह दिखाएगा कि शीला नाम है एक ऐसी पुजारिन का जिसका रोम-रोम अपने शेखर नाम के देवता की पूजा करता रहता है।"

उसके बाद कुछ क्षणों तक खामोशी रही फिर शेखर बोला—"शीला···!"

"हूं।"

"तो कल तुम मेरे साथ पिकनिक पर चल रही हो ना!"

"हां···परन्तु हम जाएंगे कहां!"

"सूरज कुण्ड।"

"इतनी दूर···!" शीला ने आश्चर्य से कहा।

"कौन-सा ज्यादा दूर है वह···केवल तीस मील दूर ही तो है। मेरा स्कूटर एक या डेढ़ घण्टे में हमें वहां पहुंचा देगा।"

"और फिर वापसी कब होगी!"

"शाम को···सूर्यास्त से पूर्व।"

"यदि देर हो गई तो!"

"असम्भव है···स्कूटर जो है हमारे पास।"

"परन्तु यह तुम्हें सूरज कुण्ड की क्या सूझी?"

"मेरे मित्रों ने उसकी बड़ी प्रशंसा की है। वहां बहुत सुन्दर-सुन्दर खंडहर हैं और वहां का पुराना किला तो पूरी दुनिया में मशहूर है।"

"ठीक है···मैं चली चलूंगी परन्तु पहली बात तो यह कि पापा से क्या बहाना बनाऊं और दूसरी बात यह कि अगर लौटने में हमें देर हो गई तो···!"

डा. डिल्ली रमण रेड्डी
[illegible]
पुस्तकालय

"इस बात की तो मैं गारण्टी देता हूं कि देर नहीं होगी···रहा बहाना बनाने का मामला तो वह तुम सोचो।"

"हूं, खैर मैं सोच लूंगी···यह बताओ सुबह किस समय चलना है।"

"ठीक नौ बजे···भोजनादि का प्रबन्ध मैं कर लूंगा।"

"खाना मैं भी लाऊंगी···वल्कि अपने हाथ से बनाकर, क्या तुम मेरे हाथ का बना खाना नहीं खाओगे ?"

"नहीं खाओगे···!" शेखर ने आश्चर्य से कहा—"अरी पगली मैं तो तरसता हूं तेरे हाथ से बने खाने के लिए।"

शीला ने उसके वक्ष में मुंह छुपाकर शरमाते हुए अन्दाज में कहा—"तो फिर बारात ले आओ ना।"

पैशाचिक चमक शेखर की आंखों में आने लगी—वह बोला—"लाऊंगा···ऐसी बारात लाऊंगा शीला कि दुनिया देखेगी और फिर तुम्हें डोली में विठाकर···!"

"श···हमें शर्म लगती है।"

शेखर हल्का-सा कहकहा लगाकर रह गया !

० ० ०

दीपक एक गहरी सांस लेकर बोला—"तो यह है अपनी कहानी मित्र···जलना और···जलते ही रहना···दूसरों को सुख पहुंचाना और स्वयं दुःखों को पालते रहना···।"

डा० हरीश जो डा०दीपक का बचपन का दोस्त था, कुछ क्षणों तक आश्चर्य से उसे देखता रहा—फिर बोला—"यार, मैं तो समझता था कि तेरे पास बुद्धि है।"

"और अब क्या समझते हो !" दीपक ने मुस्कराकर पूछा !

"यह कि गधे हैं आप।"

"कैसे ?" दीपक ने बुरा-सा मुंह बनाते हुए पूछा।

"जव श्रीमती शीलादेवी आपको पसन्द नहीं करतीं तो मारिए लात उसे।"

"और अगर दिल न माने···!"

"गोली मारो दिल को···मेरे साथ क्लब चलो···कितनी ही

शीलाओं से मैं तुम्हारा परिचय करा दूं।"

"मगर मेरे दोस्त उस जैसी कोई न होगी।"

"यह तुम्हारा भ्रम है।

"भ्रम नहीं···वास्तविकता···मेरी आंखों पर ऐनक है लेकिन तुम्हारी आंखों पर नहीं···इसके बावजूद तुम अंधे हो और तुम्हारी आंखों पर जो ऐनक चढ़ी हुई है—उसे पश्चिमी ऐनक कहा जा सकता है···पश्चिम में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद तुम पूरब को भूल चुके हो···यहां की सभ्यता को···संस्कृति को···रीति-रिवाज़ों को ···तुम्हारा प्यार डांसिग फ्लोर्स पर थिरकने के बाद शुरू होता है और आरकेस्ट्रा की अन्तिम हिचकी के साथ दम तोड़ देता है। तुम चमक-दमक के समर्थक हो—ऐसे भौंरे जो हर कली का रस चूस लेने को एटीकेट्स कहा करते हैं और मैं···थोड़ा-बहुत पढ़ लिख-कर भी उन्हीं आदर्शों का समर्थक हूं—उन्हीं परम्पराओं का पुजारी हूं जो पूरब की विशेषता है···मैं आज भी इस बात पर विश्वास रखता हूं कि प्यार आत्मा से शुरू होता है। निस्वार्थ होता है··· उसके किसी भी भाग में कहीं कोई सौदेबाजी नहीं होती—यह एक बार होता है और जिससे हो जाता है उसके आगे पूरी दुनिया तुच्छ नजर आने लगती है ··"

उसकी लम्बी-चौड़ी बात सुनकर हरीश तालियां बजाने लगा—फिर मज़ाक उड़ाने वाले अंदाज में बोला—"मेरे ख्याल से तुम डाक्टर का पेशा छोड़ दो और कहानियां लिखने लगो···जीवन भर दाल-रोटी का घाटा नहीं होगा। लिखकर दे सकता हूं···यह बात।"

दीपक ने कोई उत्तर नहीं दिया···मुस्कराता रहा···।

"मुझे आश्चर्य है।" हरीश बोला—"कि इस युग में जबकि मनुष्य के चरण चन्द्रमा की धरती पर पड़ रहे हैं, तुम हजारों वर्ष पुरानी बातों को दृढ़तापूर्वक थामे हुए हो। तुमने यह नहीं देखा कि वक्त ने कितनी करवटें ले डाली हैं। तुम्हें यह पता नहीं चला कि इस यांत्रिक युग में शराफत किसी चिड़िया का नाम भी नहीं है ···इस युग में सफल वह है जिसमें छीन लेने की योग्यता है··· जिसकी भुजाओं में बल है और जो बेहतरीन चालें चल सकता है।"

"मैंने कहा ना मुहब्बत सौदेबाजी नहीं दोस्त···यह शतरंज

का खेल भी नहीं है…।"

"दुनिया का हर जज्बा और हर चीज़ शतरंज का खेल है। कुदरत ने विसात बिछा रखी है। सफल वही होता है जो बेहतरीन चालें चल सकता है—अब तुम अपना और मेरा ही उदाहरण लो…तुम भी डाक्टर…मैं भी डाक्टर…मैं अनेक रोगियों को मार चुका हूं जबकि तुम्हारा रिकार्ड अब तक बिल्कुल साफ है…मुझे यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं कि तुम मुझसे अधिक सफल डाक्टर हो…यह भी सब जानते हैं कि मैं इस नरसिंग होम में एक साधारण डाक्टर हूं और तुम मेडिकल सुपरिण्टेंडेण्ट हो…परन्तु एक बात पूंछूं…बता सकोगे…?"

"क्या…?"

"तुम्हारा बैंक बैलेन्स क्या है?" फिर कुछ सोचते हुए वह बोला—"तुम कर्जदार भी हो।"

"हां…शायद तीन सौ रुपए तुम्हारे ही देने हैं।"

"मेरा बैंक बैलेन्स जानना चाहोगे?"

"क्या जरूरत है?"

"लेकिन मैं बताऊंगा…बयालीस हजार रुपए…पांच वर्ष की आय…परन्तु किस तरह…इस तरह कि मैं होशियार हूं…मुझे चालें चलनी आती हैं…मैं शिकार को जांच लेता हूं…जो सेठ जितना मोटा होता है…मेरी फीस भी उतनी ही मोटी हो जाती है। इस नर्सिग होम से निपटने के बाद मैं प्राइवेट प्रैक्टिस भी करता हूं जबकि तुम…तुम किसी थर्ड क्लास कहानी के हीरो की तरह फिक्स टाईम से भी अधिक समय देकर रोगियों की सेवा करने जैसी मूर्खता में व्यस्त रहते हो…तुम हर मरीज का इलाज इस तरह करते हो जैसे उससे तुम्हारा खूनी रिश्ता हो…परन्तु मैं मालूम कर सकता हूं कि उन मरीजों ने स्वस्थ होने और इस नर्सिग होम से छुट्टी पाने के बाद तुम्हारे साथ क्या किया। जिनका इलाज करते समय तुमने दिन को दिन नहीं समझा और न रात को रात।"

"उन्हें मेरे साथ क्या करना चाहिए था?"

"सब कुछ…जो भी उनके वस में था…उन्हें आर्थिक रूप से तुम्हारा साहस बढ़ाना चाहिए था।"

"क्या मैं भिखारी हूं!"

हरीश उछल पड़ा।

"बोलो···क्या मैं भिखारी हूं?"

"परन्तु तुम···तुम···।"

"मैंने उनके लिए जो कुछ किया वह मेरा कर्तव्य था और बस।"

"परन्तु उनके जिम्मे भी कुछ कर्तव्य थे।"

"कौन से कर्तव्य···वह मरीज थे···मैं डाक्टर था···मेरा धर्म था उनकी बीमारी से लगातार युद्ध करना···मैंने अपना कर्तव्य पालन किया और बस···।"

"तुमने अपने भविष्य के बारे में भी सोचा कभी?"

"वर्तमान से फुर्सत मिले तो सोचूं।"

"यह कहो मूर्खताओं से फुर्सत मिले तो सोचूं।"

"मूर्खता कैसे?"

"मान लो तुम्हारे पास एक मरीज आता है···एक मोटा सेठ जिसकी तोंद सैकड़ों हजारों पापों का मक़बरा नजर आती है, तुम्हें मालूम है कि वह लखपति नहीं बल्कि करोड़पति है···उसे साधारण-सा ब्लड-प्रेशर है···तुम क्या करोगे?"

"उचित चिकित्सा।"

"मगर कब तक···?"

"जब तक वह ठीक नहीं हो जाता।"

"गधे हो तुम···।"

"कैसे?"

"होना यह चाहिए कि दो दिन उसका इलाज ठीक हो···वह खुश होने लगे फिर उसे एक झटका दो···वह परेशान हो जाए···एक बार फिर उसका इलाज ठीक करने लगो···वह फिर खुश हो जाए···दूसरा झटका···सफल जीवन लगातार झटकों का नाम है···जो जितने ज्यादा झटके लगाएगा उतना ही उसका बैंक बैलेन्स बढ़ेगा···।"

"परन्तु यह पाप है।"

"पाप···!" हरीश गुर्राया—"मगर पुण्य कहां है। किस जगह और किस हालत में है···मुझे ले जाकर दिखाओ। जो पुण्य होता

है, वह जाड़े की ठंडी रातों में नगर के फुटपाथों पर दम तोड़ देता है और उस पुण्य की अकड़ी हुई लाशों को नगर पालिका की गाड़ियां ढोया करती हैं और जिसे तुम पाप समझते हो वह अपनी तोंद पर हाथ फेर-फेर कर हजारों-लाखों की भीड़ में, धुंआधार—भाषण करता है···उसके गले में हार डाले जाते हैं, उसकी जय-जयकार होती है—सभी सभाओं का दुलहा कहलाता है वह और जब मुझ जैसा एक विद्रोही डाक्टर पाप से वदला लेता है तो तुम जैसा मूर्ख डाक्टर धर्म और कर्तव्य की घिसी-पिटी कहानियां खोलकर बैठ जाता है···।"

"परन्तु हरीश···बुराई का मुकाबला करने के लिए आवश्यक नहीं है कि आदमी स्वयं भी बुरा बने।"

"जो अच्छे बने रहकर टें-टें करते रहते हैं, मैंने उनकी अकड़ी हुई लाशों का पोस्ट मार्टम किया है समझे!"

"अगर ऐसा हुआ है तो वह अकड़ी हुई लाशें शहीदों की थीं··· उन्हें स्वर्ग में स्थान प्राप्त हुआ होगा।"

"स्वर्ग!" हरीश ने एक लम्बा-सा कहकहा लगाया। फिर वह पागलों की तरह लगातार कहकहे लगाने लगा, उसके बाद बोला—"यदि यह सत्य है तो तुम्हें तो स्वर्ग में एक लम्बी-चौड़ी कोठी अवश्य मिलेगी···उसके साथ सर्वेन्ट्स···क्वार्टर्स भी होंगे···मुझे उन से केवल एक क्वार्टर दे देना···मैं गाड़ी चला लूंगा लेकिन···कृपया ···इस संसार में मुझे ऐश कर लेने दो···झटके लगाने दो···बैंक बैलेन्स बढ़ाने दो···चालें चलने दो···और मेरी शीलाओं में मुझे खो जाने दो···क्योंकि केवल एक शीला के पीछे मजनूं की याद ताजा करना मुझे पसन्द नहीं।"

"काश! मैं तुम्हें सही रास्ते पर ला सकता!"

"और काश, मैं तुम्हें सुधार सकता!"

"अब बन्द करो बकवास···।"

"जो आज्ञा सरकार की···।" हरीश ने ताव दिलाने वाले स्वर में कहा—"वैसे यह शेखर है कौन?"

"एक खूबसूरत युवक।"

"तुमसे भी ज्यादा···!"

"अवश्य।"

"क्या तुम्हारी तरह उसके शरीर में भी शराफत के कीटाणु पाए जाते हैं···।"

"वह शरीफ ही नजर आता है।"

हरीश छत की ओर देखकर अपना सर खुजाता हुआ बोला—"दो दीवानों का टकराव।"

"मैं मुकाबला नहीं करूंगा।" दीपक ने धीमी-सी मुस्कराहट के साथ कहा।

"मुझे मालूम है कि तुम हथियार डाल दोगे।" हरीश ने दांत पीसे—"काश तुम मेरे बचपन के मित्र न होते···अबे गधे बुद्धि से काम ले···बुद्धि से!"

"क्या मतलब?"

"मेरे दिमाग में एक चाल है।"

"कैसी चाल!"

"अगर तुम वह चाल चल दो तो शीला को प्राप्त कर लोगे।"

"कैसे?"

"शेखर सुन्दर है न!"

"हां।"

"एक सुन्दर युवक···।"

"हां।"

"यदि उसे एक सुन्दर पागल बनाकर पागलखाने में दाखिल कराने पर मजबूर कर दिया जाए तो!"

"क्या···क्या?" दीपक के नेत्र विस्मय से फटे के फटे रह गए।"

हरीश सिगरेट रोल करता हुआ बोला—"यह काम मैं भी कर सकता हूं।"

"क···कैसे!"

"उसे धोखे में रखकर या किसी बहाने से बेहोश करके ऐसी दवाएं उसके शरीर में इन्जेक्ट कर दी जाएं कि वह मानसिक सन्तु-लन खो बैठे···।"

"हरीश···हरीश!"

"शीला कुछ दिनों तक रो-धोकर सब्र कर लेगी···फिर···।"

दीपक गुस्से से थर-थर कांपता हुआ बोला—"अगर तुमने ऐसा किया तो मैं तुम्हारा गला घोंट दूंगा हरीश।"

o o o

"जब तुम वहां पहुंचोगे तो तुम्हें खुद एहसास हो जाएगा कि तुम्हारे उद्देश्य के लिए वह कितनी उचित जगह है।" अनिल ने आंख मारकर अपने दोस्त शेखर से कहा।

शेखर कुछ क्षणों तक कुछ सोचता रहा फिर पूछने लगा—"वहां किसी प्रकार का खतरा तो नहीं।"

"खतरा...कैसा खतरा ?"

"पुलिस ?"

"अरे तोबा करो यार...सूरज कुण्ड ऐयाशी का गढ़ है मैं तो वहां अनेक बार हो आया हूं—।"

"वहां पर सर्वाधिक सुरक्षित स्थान कौन-सा है।"

"पुराना किला !"

"वह भी तो खण्डहर बन चुका है !"

"हां, उसकी दीवारों का रंग काला है—बहुत भयानक नजर आता है वह—अत्यन्त डरावना—कमजोर दिल की लड़कियां तो वहां अपने आप अपने साथी के सीने से लिपट जाती हैं।"

"सच !"

"और क्या मैं झूठ बोल रहा हूं—परन्तु यह तो बताओ कि आखिर वह है कौन ?"

"कौन ?"

"जिसे तुम वहां ले जाओगे।"

"है एक लड़की।"

"क्या काबू में नहीं आ रही है ?"

"वह—वह—।"

"मगर तुम तो इस लाइन के आदमी नहीं हो।"

"बहक रहा हूं।" शेखर मुस्कराकर बोला।

"पहली कोशिश है इसीलिए डर रहे हो—कोई बात नहीं धीरे-धीरे एक्सपर्ट हो जाओगे—।"

"अच्छा अब मैं चलता हूं।"

"अरे बैठो यार।"

"नहीं—चलूंगा—।" यह कहकर शेखर बाहर निकल आया। उसे अनिल से नफरत होने लगी। किस बेदर्दी से वह बातें कर रहा था—घिनौनी बातें—।

"एक्सपर्ट !" चलते-चलते शेखर बड़बड़ाया उसकी आंखों में आंसू चमकने लगे—"क्या मैं गुण्डा बनने जा रहा हूं।"

यह उसकी अन्तरात्मा की आवाज थी।

क्षण-भर के लिए उसे अपने आपसे शर्म महसूस हुई—परन्तु फिर जब उसकी आंखों के सामने छत के हुक से लटकने वाली आगे-पीछे झूलती हुई एक लाश नाचने लगी—तो उसकी मुट्ठियां अपने आप ही आप भिंचती चली गईं। जबड़ों की मांसपेशियां उभरने और पिचकने लगीं—चेहरा गुस्से से लाल हो गया—चलते-चलते वह गुर्राहटपूर्ण स्वर में बड़बड़ाया—"कल···हां कल···शीला मैं तुम्हारे सुन्दर शरीर से खेलूंगा और कल से ठीक तीन महीने बाद ···जबकि तुम गर्भवती कहलाओगी हा···हा···हा।"

राहगीर उसे हैरत से देखने लगे। वह घबरा गया और तेज-तेज कदमों से चलने लगा—बार-बार पीछे मुड़कर भी देखता जा रहा था।

० ० ०

"और वह है वह ऐतिहासिक दुर्ग।" बूढ़े गाइड ने कारोबारी अंदाज में पुराने किले की ओर हाथ उठाकर कहना शुरू किया—"जिसे राजा विक्रमसिंह ने बनवाया था। आज से लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व महाराजा विक्रमसिंह का राज्य केवल सूरज कुण्ड तक ही सीमित होकर रह गया था। वह चारों ओर से अपने शत्रुओं से घिरा हुआ था। स्वयं उसके सम्बन्धियों ने उससे विद्रोह कर दिया था तथा उसके शत्रुओं से जा मिले थे। अतः यह दुर्ग महाराजा ने अपने और अपने बचे-खुचे साथियों की रक्षा के लिए बनवाया था और इस हिसाब से बनवाया था कि उसमें सुरक्षित रहकर वह अपने शत्रुओं से एक लम्बी जंग लड़ सके···उसकी नाममात्र वफादार सेना

उसके साथ थी। उसी सेना के जवानों ने इस दुर्ग का निर्माण किया था। कहते हैं कि यह संसार का एक मात्र दुर्ग है जिसका निर्माण कराने वाले राजा और रानी ने इसके निर्माण में स्वयं मजदूरों के रूप में काम किया था। निर्माण के बीच प्रत्येक सैनिक अपने पास शस्त्रास्त्र रखता था बिल्कुल तैयार, क्योंकि न जाने कब शत्रु आक्रमण कर दे। यही चिन्ता हर समय महाराजा विक्रमसिंह तथा उसकी सुन्दर महारानी दमयन्ती को लगी रहती थी और इस चिन्ता का मूल कारण था जहांगीरसिंह—रानी दमयन्ती का पुराना प्रेमी—वह दमयन्ती से विवाह करना चाहता था परन्तु जब उसका विवाह महाराजा विक्रमसिंह से हो गया तो वह बदले की आग में जलने लगा। उसने विक्रमसिंह के सम्बन्धियों से मिलकर षड्यन्त्र रचा, उन्हें विद्रोह पर उकसाया। फिर विक्रमसिंह के शत्रुओं से मिलकर आक्रमण करा दिया। फलस्वरूप विक्रमसिंह का राज्य सूरज कुण्ड तक सीमित होकर रह गया। इसके बावजूद वह षड्यन्त्र में व्यस्त रहा।" इतना कहकर बूढ़ा गाइड रुक गया और ललचाई हुई नजरों से उस पैकिट की ओर देखने लगा जिसमें से शेखर अपने लिए सिगरेट निकाल रहा था।

शेखर ने उसे भी सिगरेट पेश की जिसे···ही···ही···ही के साथ बूढ़े गाइड ने स्वीकार कर लिया।

वह तीनों पुनः चल पड़े। दुर्ग के भीतर उन अंधेरी कोठरियों के सामने से गुजरने वाली सड़क पर जिन कोठरियों में कभी महाराजा विक्रमसिंह के वफादार सिपाही रहा करते थे।

बूढ़े गाइड ने चलते-चलते कहना शुरू किया —"जहांगीरसिंह ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक वह विक्रमसिंह को खत्म नहीं करा देगा और जब तक रानी दमयन्ती को प्राप्त नहीं कर लेगा। सुख-चैन की नींद नहीं सोएगा। अतः वह दिन-रात विक्रमसिंह के शत्रुओं के साथ मिलकर सूरज कुण्ड पर आक्रमण करने की साजिश तैयार करता रहा। अन्ततः शत्रुओं ने आक्रमण कर दिया। सूरज कुण्ड पर भी शत्रुओं का कब्जा हो गया और विक्रमसिंह का राज्य केवल इस भयानक दुर्ग तक सीमित होकर रह गया। शत्रु भारी पड़ता रहा। शत्रु की सेनाओं ने दुर्ग के चारों ओर घेरा डाल दिया और विक्रम-

सिंह के वीर और वफादार सैनिक दुर्ग की दीवारों पर खड़े रहकर शत्रु पर आक्रमण करते रहे और अन्तिम समय तक दुर्ग की रक्षा करते रहे। उन लड़ाइयों में विक्रमसिंह के साथ-साथ रानी दमयन्ती भी भाग लिया करती थी। लड़ाई लगभग एक वर्ष तक चलती रही और यहां तक नौबत आ पहुंची कि दुर्ग में भुखमरी फैल गई। शत्रु ने चारों ओर से नाकाबन्दी कर रखी थी। इसलिए खुराक पहुंचने का प्रश्न ही नहीं था फिर हालात इतने खराब हुए कि दुर्ग के अन्दर घिरे हुए सिपाहियों ने एक-दूसरे को ही काट-काटकर खाना शुरू कर दिया और जब सिपाहियों को नर-भक्षण का चस्का पड़ गया तो दुर्ग के भीतर ही मनुष्य का मांस प्राप्त करने के लिए भयानक युद्ध शुरू हो गया। महाराजा विक्रमसिंह ने परिस्थितियों को सम्भालने की कोशिश की मगर सिपाही बिफर चुके थे। वह वहशी बन चुके थे और शत्रु क्षण-प्रतिक्षण करीब आता जा रहा था। अन्ततः एक दिन दुर्ग का लोह द्वार शत्रु के कदमों में जा पड़ा। शत्रु अन्दर दाखिल हो गया और द्वन्द्व युद्ध छिड़ गया। जहांगीरसिंह तलवार लिए भूखे-प्यासे महाराजा विक्रमसिंह पर टूट पड़ा और एक भयानक जंग शुरू हो गई—यहां—इस जगह!" बूढ़े गाइड ने संकेत किया—फिर आगे बढ़ता हुआ बोला—"आखिर—महाराजा विक्रमसिंह घावों से चूर धरती पर गिर पड़ा। जहांगीरसिंह ने उसका सर धड़ से अलग कर दिया और उसका सर अपनी तलवार की नोंक पर लेकर वह रानी दमयन्ती की खोज में चल पड़ा। उसके भयानक अट्टहास दुर्ग की दीवारों को झंझोड़ने लगे···और यहां···!" बूढ़े गाइड ने एक मेहराब की तरफ संकेत किया—"उसे रानी दमयन्ती मिली परन्तु इस तरह कि उसकी लाश झूल रही थी ···उसने अपने गले में फन्दा डालकर आत्महत्या कर ली थी। कहते हैं कि प्यास के कारण रानी की लाश के होंठों पर पपड़ियां जमी हुई थीं और वह कई दिन की भूखी थी ··यहीं इस स्थान पर जहांगीरसिंह दमयन्ती की लाश से लिपट-लिपटकर फूट-फूटकर रोता रहा था···उसे इतना प्रेम था दमयन्ती से कि वह स्वयं अपने पैरों से चलकर यहां से वापस नहीं गया बल्कि लोग उसकी लाश उठाकर यहां से ले जा सके। वह लगातार कई दिनों तक दमयन्ती की लाश

से लिपटकर फूट-फूटकर रोता रहा था और उसकी हालत भी दमयन्ती जैसी हो गई थी अर्थात् वह भी कई दिन से भूखा-प्यासा था और उसके होंठों पर भी पपड़ियां जम गई थीं। तब एक दिन उसने अपनी ही तलवार अपने पेट में भोंककर आत्महत्या कर ली थी।"

शीला सहमकर शेखर से लिपट-सी गई थी।

"और कहते हैं कि आज भी दुर्ग के काले और भयानक पत्थर रात्रि के अन्धकार में उस दुखद कहानी को बार-बार दुहराते हैं। यहां विक्रमसिंह और जहांगीरसिंह की तलवारों की झंकार गूंजा करती है। रानी दमयन्ती की सिसकियां सुनाई देती हैं और जहांगीरसिंह के अट्टहास गूंजा करते हैं···भयानक सन्नाटे और वीरानियां इस दुर्ग का भाग्य बन चुके हैं। यहां आज तक ऐसे कहकहे नहीं गूंजे जो सच्ची खुशी से भरे हुए हों···यहां केवल बरबादियां हैं···वीरानियां हैं।"

"श···शेखर!" शीला ने कंपित स्वर में कहा।

"हूं।"

"यहां से जल्दी चलो—मु···मुझे डर लगता है।"

शेखर के होंठों पर मुस्कान फैल गई।

शीघ्र ही वह लोग दुर्ग से बाहर निकल आए।

दोपहर के दो बजे तक बूढ़ा गाइड उन्हें सूरज कुण्ड के महत्वपूर्ण स्थान दिखाता रहा—फिर शेखर ने उसे पैसे और भोजन देकर विदा कर दिया। स्वयं उन दोनों को भी जोरों से भूख लगी थी अतः एक जगह पास के फर्श पर शेखर ने चादर फैला दी—वह दोनों खाना खाने लगे। फिर उन्होंने थर्मस में से गर्म काफी निकाल कर पीनी शुरू कर दी।

शेखर अपने विचारों में खोया हुआ था और शीला अपने ख्यालों में खोई हुई थी। बार-बार उसकी आंखों के सामने विक्रमसिंह, जहांगीरसिंह और दमयन्ती के काल्पनिक चित्र घूमने लगे जबकि शेखर दूसरे विचारों में खोया था। उसकी पैनी दृष्टि चारों ओर का सतर्क निरीक्षण कर रही थी। और दिमाग सोच रहा था कि कौन-सा स्थान उचित रहेगा—रह-रहकर उसका मस्तिष्क केवल एक स्थान की सिफारिश करता था दुर्ग की—जिसका नाम सुनकर ही

शीला थर-थर कांपने लगती थी।

वह सोचता रहा—सोचता रहा फिर तभी चौंका जबकि शीला उसे झंझोड़ने लगी—"आं···हां—क्या बात है!" उसने पूछा।

"कहां हो तुम?"

"क्या मतलब।"

"मैं पूछ रही हूं तुम हो कहां?"

"यहीं तो हूं तुम्हारे पास।"

"कितनी देर से मैं तुम्हें आवाज़ें दे रही हूं और तुम उत्तर ही नहीं देते!"

"अरे···!" शेखर आश्चर्य से बोला—"कमाल है।"

"क्या सोच रहे थे?"

"म···मैं···मैं!" शेखर गड़बड़ा गया फिर उसने जल्दी से बात बनाई—"मैं जहांगीरसिंह के बारे में सोच रहा था।"

"क्या?"

"बहुत कुछ—फिर मैं दमयन्ती के बारे में सोचने लगा था।"

"क्या?"

"बहुत कुछ।"

"फिर भी।"

"छोड़ो तुम यह बताओ कि इस कहानी का सबसे ज्यादा दर्दनाक पात्र कौन-सा है।"

"मैं समझी नहीं।"

"अभागा पात्र—जिस पर दया आए।"

शीला कुछ क्षणों तक सोचती रही फिर बोली—"जहांगीरसिंह।"

"शीला···!" शेखर आंखें निकालकर गुर्राया—उसका चेहरा लाल हो गया और वह क्रोध से थर-थर कांपने लगा।

"शेखर···!" शीला घबरा गई।

"बकवास बन्द करो···!" शेखर गुर्राया—"इस युग की बेवफा दमयन्ती।"

शीला की आंखें हैरत से फैल-सी गईं।

शेखर उछलकर खड़ा हो गया और पतलून की जेबों में हाथ

डालकर शीला के सामने पागलों की तरह टहल-टहलकर बोला—"मैं सब समझता हूं—मैं सब जानता हूं···मैं पहले ही उस चिंगारी से परिचित था जो तुम्हारे दिल के किसी कोने से उभरी थी। वह चिंगारी जो दीपक के लिए तुम्हारी मुहब्बत का लरजता कंपकंपाता और बुझा-बुझा-सा प्रदर्शन था। मुझे मालूम था कि यह चिंगारी शोला बनेगी और आज तुम्हारे उत्तर ने सिद्ध कर दिया है कि वह चिंगारी शोला बन चुकी है और अब लपक रही है वर्तमान के विक्रमसिंह की ओर शेखर ने उंगली से अपनी छाती ठोककर कहा—"तलवार थामे हुए ताकि वह करदे विक्रमसिंह को घावों से चूर-चूर और उसका सर धड़ से अलग करके, चल दे उस बेवफा दमयन्ती की ओर जो वचन देकर मुकर जाया करती है जो प्यार और जवानी के सागर को पार करने के लिए दो नावों में यात्रा करना चाहती है।"

"शेखर···शेखर !"

"तुम्हारे चीखने से मैं खामोश नहीं हो जाऊंगा—तुम्हारा हैरत से आंखें फैलाना—कुछ न समझने वाले अन्दाज में कंधों को उचकाना मेरे मस्तिष्क पर सन्देह की निगाहें डालना—और बार-बार वफादारी का इकरार करना उन विचारों को खुरच नहीं सकता जो मेरे दिमाग की सतह पर ठीक वैसा खतरा बनकर उभर रहे हैं जैसा खतरा विक्रमसिंह के लिए जहांगीरसिंह था।"

"शेखर···तुम मुझे गालियां दे रहे हो।"

"मैं तुम्हारा गला भी घोंट सकता हूं।"

"घोंट दो मेरा गला, खत्म कर दो मुझे, मगर भगवान के लिए गालियां न दो।" शीला भर्राई हुई आवाज़ में बोली फिर रोने लगी।"

"त्रिया चरित्र···!" शेखर गुर्राया—फिर जंगली पशु की भांति शीला पर झपटकर बोला—"जी तो चाहता है कि तुम्हारा गला घोंट दूं—ताकि तुम्हारे अधरों से कभी दीपक का नाम न सुनाई दे ताकि बार-बार मेरे प्यार का अपमान न हो।"

"तो घोंट दो मेरा गला···!" शीला सर उठाकर बोली—"उसकी आंखों से टप-टप आंसू बह रहे थे।"

एक जंगलीपन-सा छा गया था शेखर पर—बिल्कुल पागलों की तरह। उसके कंपकंपाते हुए हाथ शीला की गरदन की तरफ बढ़े, गरदन को अपनी पकड़ में लिया—फिर यह पकड़ सख्त होने लगी।

शीला ने अपने आपको बिल्कुल ढीला छोड़ दिया।

शेखर की पकड़ सख्त होती रही—यहां तक कि शीला का चेहरा अंगारे की तरह लाल हो गया और उसकी आंखें उबलती हुई-सी महसूस होने लगीं—उन उबलती हुई आंखों से आंसुओं के मोती अब टूट रहे थे।

अचानक शेखर के हाथों की पकड़ ढीली पड़ने लगी। उसने अपने हाथ हटाए सर झुकाया फिर शीला की गोद में गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा।

शीला व्याकुल हो गई। वह पागलों की तरह उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगी और सर के पिछले हिस्से को बेतहाशा चूमने लगी।

"म···मुझे क्षमा कर दो शीला—मैं अपने आपमें नहीं रहा था। दुर्गा की दुख भरी कहानी ने मुझे बेकाबू कर दिया था। अपने जीवन का जहांगीरसिंह मेरी नज़रों के सामने आ गया था···वह हंसी उड़ाने वाली मुद्रा में मुझे देख-देखकर मुस्करा रहा था और और जब तुमने यह बताया कि सबसे ज्यादा दया का पात्र जहांगीर-सिंह था तो मेरी आंखों में खून उतर आया।"

कुछ क्षणों तक खामोशी रही—फिर शीला बोली—"अगर तुम अपने आपको विक्रमसिंह समझ रहे थे तो तुम्हें यह भी तो सोचना चाहिए था कि वह दमयन्ती ही थी जिसने अपने पति के साथ वफादारी का प्रमाण अपनी लाश के रूप में दिया था।"

"मगर तुमने जहांगीरसिंह के दुर्भाग्य का इकरार क्यों किया···क्या वह जालिम नहीं था?"

"अवश्य था परन्तु उसका जुल्म भी उसकी अथाह मुहब्बत का प्रतीक था।" शीला कहती रही—"उसकी मुहब्बत की प्रशंसा न करना हकीकत से आंखें मूंदने के बराबर होगा। अगर दमयन्ती की लाश को वहीं छोड़कर वह वापस चला जाता और दूसरी दमयन्ती की तलाश करने लगता तो उसे जालिम, स्वार्थी, बदमाश और अपनी वासना का गुलाम आदि-आदि कहा जाता। परन्तु जब उसने

प्राण दे दिए तो जहां दमयन्ती की लाश अपने पति के साथ वफ़ादारी का प्रमाण थी वहां जहांगीरसिंह की लाश भी उसके सच्चे प्रेम का जीता-जागता प्रमाण थी। अब प्रश्न यह है कि वह अभागा क्यों था। इसका उत्तर यह है कि इस कहानी के प्रत्येक पात्र को कुछ-न-कुछ मिला। विक्रमसिंह को दमयन्ती मिली, दमयन्ती को विक्रमसिंह मिला परन्तु···जहांगीरसिंह को क्या मिला ?"

शेखर पर स्तब्धता-सी छा गई थी। कुछ देर बाद उसने पूछा—"दमयन्ती को जहांगीरसिंह से मुहब्बत थी ?"

"हरगिज नहीं।"

"फिर किससे थी ?"

"विक्रमसिंह से।"

"इसका प्रमाण ?"

"वह दुर्ग की दीवारों पर चढ़कर जहांगीरसिंह के साथियों पर हमले किया करती थी। उसने उपवास किए थे और जब उसका पति उसे छोड़ गया था तो उसने स्वयं को लाश में परिवर्तित कर दिया था।"

"लोक-लाज के डर से।"

"क्या मतलब ?"

"उसने आत्महत्या दिल से नहीं की थी, बल्कि लोकलाज के डर से की थी।"

"वरना !"

"वरना उसके हृदय में जहांगीरसिंह के लिए जगह मौजूद थी।"

"यह झूठ है।"

"जो चीज मनुष्य के अपने विचारों से मेल नहीं खाती, उसे वह तुरन्त झूठ का नाम दे देता है।"

शीला मुस्कराकर बोली—"हमें बहस नहीं करनी चाहिए, क्योंकि बहस कटुताओं को जन्म देती है।"

"अब तुम खुद को बचाने की कोशिश कर रही हो।"

"मेरे ख्याल से आज तुम लड़ने का इरादा करके आए हो ?"

"नहीं···काश मैं यहां न आता···काश मैंने जहांगीरसिंह की

कहानी न सुनी होती।"

"मेरी समझ में नहीं आता कि तुम्हारे भ्रम को मैं किस तरह दूर करूं?"

शेखर फीकी-सी हंसी हंसकर बोला—"और आवश्यकता भी क्या है उसे दूर करने की!"

अचानक शीला की मुस्कराहट टूट गई और वहां उदासियां फैल गईं। वह बोली—"जब अभी से तुम्हारा यह हाल है तो समझ नहीं आता हमारा जीवन कैसे बीतेगा?"

शेखर उसे ध्यानपूर्वक देखने लगा। फिर बोला—"एक बात पूछूं···उत्तर दोगी?"

"पूछो।"

"क्या सचमुच तुम्हें दीपक से प्यार हो गया है?"

"क्यों तुम मुझे बार-बार गालियां दे रहे हो शेखर?"

"मेरी बात का उत्तर दो।"

"नहीं, मैं प्रलय पर्यन्त उससे प्रेम नहीं कर सकती।"

"फिर?"

"पहले मुझे उससे नफरत थी। मगर अब···उस पर दया आती है।"

"और एक दिन यह दया प्यार में परिवर्तित हो जाएगी।"

"ऐसा कभी नहीं हो सकता।" शीला बोली—"तुम अकारण मुझ पर शक कर रहे हो, मैं मानती हूं कि जहां प्यार होता है, वहां शक भी हुआ करता है और प्यार जितना ज्यादा हो शक भी उतना ही ज्यादा होता है। मगर इसका मतलब यह नहीं कि तुम··· तुम!"

"क्या तुम मेरे अलावा किसी और से भी प्यार कर सकती हो?"

"कदापि नहीं।"

"इसका मतलब यह हुआ कि तुम्हारा सब कुछ मेरे लिये है।" शेखर ने तुरन्त कहा। वह घेरघार कर उसे अपने मूल उद्देश्य की ओर ले आया था। स्वयं उसके ही शब्दों के शिकंजे में जकड़ कर। अब वह एक अनुभवी शिकारी की भांति मुस्करा रहा था।

"हां।" शीला ने जोशीले स्वर में कहा।

"तुम्हारा सब कुछ ?"

"हां-हां-हां।"

"यह सुन्दर शरीर, यह गोरा मुखड़ा, और यह घने केश और ...यह सब कुछ...!" वह उसके कन्धे पकड़कर झंझोड़ता हुआ बोला।

"हां।"

"प्रमाण प्रस्तुत कर सकोगी।"

"प्रमाण !"

"हां।" शेखर पागलों की तरह बोला—"ताकि मैं चैन की सांस ले सकूं...ताकि सारी शंकाओं का समाधान हो जाए। ताकि सारे शक मेरे दिल से विदा हो जायें...ताकि विक्रमसिंह को यकीन आ जाए कि उसकी दमयन्ती कुछ और नहीं तो कम से कम लोक-लाज के डर से उसकी तथा सिर्फ उसकी होकर रहेगी।"

शीला के चेहरे पर सन्नाटा फैल गया।

शेखर पागलों की तरह उसे देखता रहा फिर बड़बड़ाया—"मुझे यकीन था कि तुम्हारा उत्तर नहीं में होगा। मुझे मालूम था कि तुम्हारे दिल के किसी कोने में कहीं खोट मौजूद है।"

शीला खामोश रही।

"आओ...थोड़ी देर घूमेंगे...?"

किसी ऐसे खिलौने की भांति जिसे चाबी भरकर खड़े होने की आज्ञा दे दी गई हो—शीला खड़ी हो गई। फिर वह शेखर के साथ चलती रही खामोश—गुम-सुम।

शेखर बेतहाशा सिगरेट फूंकने लगा था।

जब वह दोनों घूमते-घूमते दुर्ग के फाटक के निकट पहुंचे तो शेखर बोला—"इस दुर्ग के दर व दीवार मुझसे चीख-चीखकर कह रहे हैं...विक्रमसिंह दमयन्ती से अपने प्रश्न के उत्तर का तकाजा कर, मगर मैं तकाजा नहीं करूंगा।"

"क...क्या ऐसा करना उचित होगा !"

"तो तुम सोच रही हो...तुम उलझनों में घिरी हो...इसका मतलब है कि तुम्हारे मन में जो कुछ भी है, वह प्रत्यक्ष नहीं है।"

शीला ने कोई उत्तर नहीं दिया।

सहसा आकाश से पानी बरसने लगा।

वह दोनों उछल पड़े—और आकाश की ओर देखने लगे—बादलों के वह टुकड़े जो कुछ देर पहले तक टहलते हुए नज़र आ रहे थे, अब आकाश पर जम गए थे और बिना गरजे बरसने लगे थे।

ऐसे में सर छुपाने की जगह दुर्ग ही थी। शेखर ने शीला का हाथ पकड़कर उसे दुर्ग की ओर घसीटा।

"तत···तुम्हारा स्कूटर!"

"उसे भीगने दो।"

वर्षा तेज़ी पकड़ती जा रही थी और शेखर उसे भयानक दुर्ग के अन्दर भगाए लिए जा रहा था। एक ऐसी जगह पहुंचकर वह रुक गया जहां उनके सरों पर छत थी। टूटी-फूटी-सी।

"यहां हम वर्षा से बचे रह सकते हैं।" वह बड़बड़ाया—और वहशियाना अन्दाज़ में शीला को देखने लगा।

वर्षा में भीगने के कारण हल्के गुलाबी रंग का छोटा और तंग ब्लाउज उसके उभरे व संगमरमर की तरह सफेद व चिकने वक्षस्थल से चिपक-सा गया था। जिसके कारण उसका वक्षस्थल और भी अधिक आकर्षण हो उठा था।

कूल्हे से नीचे बंधी उसी रंग की नायलान की गुलाबी साड़ी भी भीग जाने के कारण उसके शरीर से बुरी तरह चिपक गई थी और वह ठंड के कारण थर-थर कांपने लगी थी।

शीला की साड़ी में से झांकते हुए गोल-गोल कूल्हों के कटाव, भीगे हुए ब्लाउज में से झांकते हुए गोरे वक्षस्थल व ब्लाउज के नीचे बल खाती गोरी चिकनी कमर को देखकर शेखर पर नशा-सा चढ़ने लगा। उसकी भुजायें इस सौन्दर्य की मूर्ति को अपने में समेटने के लिए व्याकुल हो उठीं।

सहसा शेखर ने अपने को काबू में किया और अपना कोट उतार कर देता हुआ बोला—"इसे पहन लो···अपनी साड़ी उतार दो···वरना बुखार चढ़ जाएगा···वह सामने लकड़ियां पड़ी हैं···मैं उन्हें उठा लाता हूं···आग जला लेंगे तो सरदी कम हो जाएगी···उफ हवायें कितनी ठंडी हो गई हैं।"

यह कहकर शेखर लकड़ियां उठाने चल पड़ा।

हवा सचमुच इतनी ठंडी हो चुकी थी कि तीर की तरह शरीर को भेद रही थी। उस पर पानी में भीगी साड़ी—अतः शीला ने यही उचित समझा कि साड़ी उतार दे—साड़ी तथा ब्लाउज उतारने के बाद उसने शेखर का कोट पहन लिया और ऊपर तक बटन लगा लिए।

शेखर लकड़ियां ले आया तो दोनों मिलकर आग जलाने में व्यस्त हो गए। जिस हिस्से में वह दोनों मौजूद थे वहां तीन तरफ दीवारें थीं और चौथी तरफ एक भयानक मेहराब—शायद कभी वहां कोई दरवाज़ा रहा हो—उस हिस्से की हालत बताती थी कि कभी वह एक शानदार कमरा रहा होगा।

लकड़ियों के साथ-साथ शेखर घास-फूस भी ले आया था। उसका बिस्तर बनाकर उसने शीला से कहा—"तुम लेट जाओ।"

"नहीं, मैं ऐसे ही ठीक हूं।" शीला हाथ तापती हुई बोली—शेखर उससे सटकर बैठ गया और खुद भी हाथ तापने लगा। उन दोनों के चेहरे आग के लपकते हुए शोलों की रोशनी में लाल होकर अंगारों की तरह चमक रहे थे।

शेखर बार-बार कनखियों से शीला को देखता जा रहा था। उसके दहकते हुए गालों को—उसके जलते हुए होंठों को और मदभरे नयनों को—उन केशों को जो उसकी कमर पर से होते हुए कूल्हों पर लहरा रहे थे। यह सब कुछ देखकर उसे अपने आप पर काबू नहीं रहा था—उसकी सांस तेज-तेज चलने लगी थी।

"शील।" उसने प्यार से शीला को पुकारा।

"हूं।"

"गुड़िया।"

"हूं।"

"सर्दी लग रही है?"

"हां।"

"बहुत ज्यादा?"

"हां।"

"और?"

"और डर लग रहा है !"
"किससे ?"
"इस दुर्ग से···और···और तुमसे ।"
"मुझसे···क्यों ?"
"तुम वहुत बुरे हो···जी ।"
"क्यों ?"
"तुम मेरा गला घोंट रहे थे ना !"
शेखर ने उसकी गरदन में हाथ डालकर कहा—"क्या मेरे हाथ कभी अपनी रानी का गला घोंट सकते हैं ?"
"तो फिर वह सब क्या था ।"
"मेरा पागलपन···मेरा असीम प्यार ।"
"अगर मालूम होता कि तुम इतने दरिन्दे हो तो···।"
"तो···?"
"तुमसे कभी प्यार न करती ।"
"तो अब तक नाराज हो तुम ।"
"हां ।"
"आओ हम मना लें ।" यह कहकर शेखर ने उसे अपनी ओर घसीटा और अपनी गोद में उसका सिर रखकर उसके ऊपर झुक गया। शीला के जलते हुए होंठों पर अपने प्यासे होंठ रखकर वह उसके केशों में उंगलियां फेरने लगा।

पहले तो शीला उसे रोकती रही फिर उसके दोनों हाथ भी शेखर की गरदन के पिछले हिस्से पर पहुंच गए और उन हाथों की पकड़ शेखर की गरदन पर मज़बूत होती गई।

शेखर दीवानों की तरह उसे प्यार करने लगा था, चूमने लगा था।

भयानक मेहराब में लटकी हुई शीला की रंगीन साड़ी ज़ोर-ज़ोर से कंपकंपाने लगी। आग के शोले उछलने लगे। मानो व्याकुल हुए जा रहे हों आकाश को छूने के लिए और शेखर शीला पर छाता चला गया।

कुछ क्षणोपरांत उसने बड़े प्यार से कहा—"शील !"
"हूं ।"

"गुड़िया।"

"हूं।"

"तुम्हें मुझसे प्यार है ना ?"

"हां।"

"कितना ?"

"अरे···यह क्या कर रहे हो !"

"शीला···तुम्हें कसम है···खामोश रहो।" शेखर फंसी-फंसी आवाज़ में बोला—"मरा मुंह देखो मेरा अगर अब कुछ बोलो।

यह कहकर वह कोट के बटन खोलने लगा।

अचानक बादल बड़े ज़ोर से गरजने लगा—हवाओं के झंक्खड़ चीखने-चिघाड़ने लगे—और एक तूफान-सा आ गया वहां, फिर बिजली चमकी तो क्षण भर के लिए वह मेहराब प्रकाश में नहा गया जो सामने ही था और जहां दमयन्ती की लाश से जहांगीरसिंह फूट-फूट कर रोता रहा था।

० ० ०

"मैंने सोचा बहुत दिन हो गए आपको देखे हुए···।" दीपक ने कहा—"शायद दो महीने से भी ज्यादा···पहले तो सोचता रहा कि शायद आप खुद कभी रास्ता भटककर मेरे नर्सिंग होम चली आयें···प्रतीक्षा करता रहा आपकी···परन्तु अब मैंने सोचा मैं ही मूंछ नीची कर लूं।"

शीला के होंठों पर एक फीकी-सी मुस्कान फैल गई।

"इस बीच सेठजी से कई बार मिलना हुआ···खुद वह नर्सिंग होम आए थे। आजकल उन्हें ब्लड प्रेशर की शिकायत चल रही है ना···मैं ही इलाज कर रहा हूं।"

"पापा बता रहे थे।" शीला ने सिर हिलाया।

"उन्होंने कई बार आपका जिकर किया···वह कह रहे थे कि पिछले दो-ढाई महीनों से वह आपमें पर्याप्त परिवर्तन का अनुभव कर रहे हैं।"

"परिवर्तन !" शीला चौंक पड़ी।

"हां···परिवर्तन।"

"कैसा परिवर्तन ?"

"उनका विचार है कि आजकल आप बुझी-बुझी-सी रहती हैं।"

"न···नहीं तो।"

"उन्होंने मुझसे कई बार कहा कि मैं आपसे मिलूं और पूछूं कि···!"

"कि···!"

"आप खामोश-खामोश-सी क्यों रहती हैं।"

शीला ने जबरदस्ती की मुस्कराहट अपने होंठों पर लाकर कहा—"वास्तव में पापा को ब्लड प्रेशर के साथ-साथ वहम की बीमारी भी हो गई है।"

"ऐसा नहीं है।"

"क्यों ?"

"स्वयं मैं भी वही सब कुछ महसूस कर रहा हूं जो उन्होंने बताया है।"

"क्या ?"

"आप सचमुच बुझी-बुझी-सी नजर आ रही हैं।"

"तो फिर आप अपना भी मुआयना कराइए किसी डाक्टर से।"

"क्यों ?"

"वहम की बीमारी आपको भी अपना शिकार बना चुकी है।"

"यदि आप ज़िद करती हैं तो मान लेता हूं कि मुझे बीमारी हो गई है। परन्तु इतना कहे बिना न रहूंगा कि क्या वह आप नहीं थीं जो हमेशा कहकहे लगाती रहती थीं···क्या वह आप नहीं थीं जो हमेशा मेरी हंसी उड़ाया करती थीं···क्या वह आप नहीं थीं जिसके चेहरे पर कभी गम की हल्की-सी परछाईं भी नहीं होती थी। मुझे कहने दीजिए वह आप ही थीं।"

"हां···वह मैं थी मगर समय के साथ-साथ मनुष्य बदलता रहता है। जिस बूढ़े के चेहरे पर गम्भीरता हुआ करती है कौन कह सकता है कि कभी वह एक चंचल बालक न रहा होगा।"

"तो आप बूढ़ी हो गई हैं !"

"नहीं···।"

"बस ऐसे ही।"

"कोई बात तो है।"

"अगर है भी तो मैं आपको नहीं बताऊंगी···एक बात पूछ सकती हूं···मैं आपसे!"

"अवश्य पूछिए।"

"क्या आपने पापा को शेखर के बारे में कुछ बताया है।"

दीपक उछल पड़ा। फिर उदास स्वर में बोला—"सपने में भी नहीं सोचा था कि आप मुझे इतना गिरा हुआ समझेंगी।"

"तो आपने उन्हें कुछ नहीं बताया।"

"अगर गले पर कोई छुरी रखकर भी पूछेगा तो नहीं बताऊंगा।"

"पापा को कुछ शक हो गया है···।" शीला शून्य में घूरती हुई बोली—"बार-बार शेखर का जिकर करते हैं···उसे बुरा बताते हैं और···।"

"और आपको मुझ पर शक है···कि मैं आपके पापा से शेखर के बारे में कान भरता हूं···।" दीपक ने शीला की बात बीच में काटते हुए कहा।

"हां।"

शीला ने इस विषय में कुछ नहीं कहा। कुछ क्षणों तक खामोशी छाई रही फिर बोली—"पापा मुझसे बार-बार शादी के लिए कह रहे हैं।"

"स्वाभाविक बात है···जवान लड़की का बाप उठते-बैठते यही सपने देखा करता है कि···।"

"नहीं···मेरा ख्याल है कि आपने उन्हें भड़काया है···बहुत कुछ सिखाया है आपने उन्हें···मैं सोचती हूं कि वह आप ही हैं, जो मेरी खुशियों को स्लो प्वाईज़न (धीमा जहर) दे रहे हैं।"

"शीला···!" दीपक आश्चर्यपूर्ण स्वर में चीखा।

"मैं सपने में भी नहीं सोच सकती थी कि आप इतना गिर जायेंगे।"

ऐनक के मोटे शीशों के पीछे दीपक की खूबसूरत मगर कम-

ग्रोर ग्रांखों में दो ग्रांसू थरथराने लगे—उसने भर्राई हुई ग्रावाज में पूछा—"किस तरह ग्रापको मैं यकीन दिला सकता हूं कि मैंने वह सब कुछ नहीं किया जो ग्राप मेरे साथ जोड़ रही हैं।"

"एक रास्ता है···"

"क···कौन-सा रास्ता ?"

"केवल एक ही रास्ता है।" शीला बड़बड़ाई।

"मुझे बताइये···मैं सब कुछ करने के लिए तैयार हूं···।"

"वचन देते हैं ग्राप···?"

दीपक ने सिर हिलाया।

"दीजिए वचन !" शीला ने हाथ बढ़ाया।

दीपक ने ग्रपना कंपकंपाता हुग्रा हाथ उसके हाथ पर रख दिया।

"ऐसे नहीं···मेरी कसम खाकर कहिए कि जो मैं कहूंगी वही करेंगे ग्राप···ग्रौर जो हकीकत होगी उसे ग्राप किसी को नहीं बतायेंगे···इस सिलसिले में ग्राप खामोश रहेंगे ग्रौर इस बारे में सब कुछ भूल जाएंगे।"

"मैं ग्रापकी कसम खाकर कहता हूं कि मैं वही करूंगा जो ग्राप कहेंगी···।"

शीला काफी देर तक उसका हाथ पकड़े उसे देखती रही फिर सर झुकाकर बोली—"पापा इन दिनों साफ-साफ मुझसे कहने लगे हैं कि मैं ग्रापसे शादी कर लूं।"

"ज···जी !"

"मगर ग्राप जानते हैं कि मैं ऐसा नहीं कर सकती।"

दीपक ने गहरी सांस ली।

"ग्रापको उनसे कहना पड़ेगा कि ग्राप मुझसे शादी करना नहीं चाहते।"

एक हलचल-सी पैदा हो गई···दीपक के मस्तिष्क में···खोया हुग्रा विश्वास जीतने के लिए कितना बड़ा वचन दे बैठा था वह !

"कहेंगे ना ग्राप ?" शीला ने पूछा।

"हां।"

"एक बात ग्रौर है।"

"क···क्या अब भी कुछ रह गया है।"

"हां।"

"कह डालिए वह भी।"

"मुझसे भूल हो गई है···।"

"क्या ?"

"एक बार वे मुझे सूरज कुण्ड ले गए थे···वर्षा के कारण हम दोनों को पुराने किले में शरण लेनी पड़ी थी और वहां···वहां···।"

ऐनक के मोटे शीशों के पीछे दीपक की आंखें हैरत से सिकुड़ने लगीं।

शीला सर झुकाकर बोली—"अब मैं उनके बच्चे की···।" इतना कहकर शीला सुबक पड़ी।

दीपक ऐसे उछला जैसे उसे बिजली का करेन्ट छू गया हो।

"और यही कारण है कि गत दो-ढाई महीनों से मैं···म··· मैं···।"

"श···शीला···!"

"वह···वह चाहते हैं कि यह आरोप आपके सर पड़ जाए।"

"न···नहीं !"

"केवल यही एक उपाय होगा जो पापा को मजबूर कर देगा कि वह उनके साथ मेरी शादी पर राज़ी हो जाएं, अगर आप ···यह आरोप अपने सर लेकर शादी से इनकार कर दें तो पापा उनके पिताजी के पास चले जाएंगे और उन्होंने वचन दिया है कि वह अपने पिताजी को राजी कर लेंगे इस प्रकार हमारे खानदानों की आपसी शत्रुता भी समाप्त हो जाएगी।"

भावनाओं के आवेश में आकर दीपक पागलों की तरह अपनी उंगलियां चटकाने लगा था।

"अगर इस तरीके पर अमल नहीं किया गया तो शत्रुता के कारण पापा जीवन भर उनके साथ मेरी शादी पर राजी नहीं होंगे···मैं जानती हूं कि यह बहुत बड़ा जुल्म है आपके साथ···म ···मगर···क्या आप यह कर सकेंगे।"

"हां, वचन जो दिया है मैंने।" इतना कहकर डा० दीपक ने बड़ेपन का कंपकंपाता हुआ हाथ शीला के सिर पर रख दिया।

शीला के चेहरे पर इत्मीनान छा गया था।

० ० ०

शान्तिप्रसाद का चेहरा खुशी से खिल उठा। बहुत दिनों बाद आज उनके अधरों पर मुस्कान फैली थी। एक ऐसी मुस्कान जिसके पीछे बदले की भावना झांक रही थी।

और शेखर कह रहा था—"उस रोज़ मैं आराम से पैर फैलाकर सो सकूंगा जब···केदारनाथ आपसे अपनी इज्ज़त की भीख मांगने आएंगे, जब वह आपके चरणों में अपना सर रख देंगे। जब वह गिड़गिड़ाकर आपसे दया की भीख मांगेंगे···ठीक उसी तरह जैसे आपने उनसे मांगी थी।"

शान्तिप्रसाद का चेहरा हंसते-हंसते खिच-सा गया। उनकी बूढ़ी आंखों से सामने दो लाशें थिरकने लगीं···दो ठंडी लाशें··· जो धू-धू करती चिता की गर्म राख में बदल गई थीं···राख··· जिसे हाथ में लेकर उन्होंने क़सम खाई थी।

० ० ०

सेठ केदारनाथ गुस्से से पागल हुए जा रहे थे। उनका शरीर थरथर कांप रहा था और बड़ी-बड़ी मूंछें कांप रही थीं। वह मूंछें जिन्होंने कभी झुकना नहीं सीखा था।

शीला सिसक रही थी।

"यह सब झूठ है—बकवास है मैं जानता हूं कि तुझे दीपक से नफरत है। इसलिए तू उस पर आरोप लगा रही है। तेरी खुद हिम्मत नहीं पड़ी चुनांचे तूने घर की नौकरानी का सहारा लिया। यह सब षड्यंत्र है शीला···मैं अच्छी तरह जानता हूं···मुझे मालूम है दीपक इतना कमीना नहीं हो सकता। यह कमीनापन दुनिया में केवल एक आदमी कर सकता है और उसका नाम है शेखर··· एक सुन्दर राक्षस जिसने तुझ पर जादू कर रखा है···जो तुझसे अपनी बहन का बदला लेना चाहता है।"

शीला घुटनों में सर दिए सिसकती रही।

दीपक चौंककर सीधा हो गया। वह हरीश की तरफ झुककर

० ० ०

उससे बातें कर रहा था। चौंक पड़ने का कारण यह था कि किसी ने जोर से दरवाजा खोला था। फिर दरवाजा खोलने वाला नजर आया। वह सेठ केदारनाथ थे।

दीपक जल्दी से खड़ा हो गया। हरीश ने उसकी नकल की।

"बैठ जाओ तुम दोनों।" सेठ केदारनाथ ने बेचैनी के साथ कहा।

"आप भी तशरीफ रखिए न!" दीपक ने कुर्सी की ओर संकेत किया।

सेठजी कुर्सी में धंस गए। फिर हरीश की ओर देखकर बोले—"यह साहब?"

"मेरे मित्र हैं डा० हरीश।"

"हूं···मैं तुमसे अकेले में कुछ बातें करना चाहता था।"

दीपक ने अपने पूरे शरीर में झुरझुरी-सी महसूस की। वह समझ गया कि केदारनाथ अकेले में बात करने के इच्छुक क्यों हैं। उसने हरीश को चले जाने का संकेत किया।

हरीश चकित मुद्रा में कमरे से निकल गया। दरवाजे से बाहर जाते समय उसने विचित्र-सी निगाहों से सेठ केदारनाथ को देखा।

दीपक के पूरे शरीर में भय की ठंडी लहरें दौड़ती चली जा रही थीं। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह हालात का मुकाबला किस तरह करेगा।

"दीपक!"

"ज···जी।"

"एक आश्चर्यजनक बात मुझे मालूम हुई है···मुझे यकीन नहीं आता उस बात पर···समझ में नहीं आता कि···कि तुम विमला को जानते हो?"

"ब···बिमला!"

"हां···मेरे घर की सबसे पुरानी नौकरानी।"

"जी हां।"

"उसने मुझे बताया है कि शीला···म···मेरा मतलब है ···कि पिछले दो-ढाई महीनों से वह चुप-चुप-सी नजर आ र

थी न···।"

"ज···जी।"

"उसके पेट में पाप पल रहा है।"

दीपक यह बात सुनने के लिए पहले से तैयार था। इसलिए उसे आश्चर्य नहीं हुआ। उसने केवल इतना किया कि अपना सर झुका लिया।

"विमला कहती है कि···कि···हालांकि मुझे यकीन नहीं लेकिन···जो कुछ वह कहती है···उसके अनुसार यह पाप तुम्हारा है···शीला भी यही कहती है मगर···मैं नहीं मानता। इसलिए कह दो दीपक कि यह सब झूठ है···यह कि तुमने पाप नहीं किया है और यह भी कि शीला के पेट में कोई पाप नहीं पल रहा है··· भगवान के लिए कह दो कि यह सब झूठ है···शीला और विमला ने मुझसे झूठ बोला है और शीला गंगाजल की तरह पवित्र है··· कह दो भगवान के लिए दीपक कह दो कि यह सब झूठ है और शीला ने यह सब झूठ इसलिए बोला है कि मैं घबराकर जल्दी से जल्दी उसकी शादी शेखर से कर दूं।"

दीपक सर झुकाए खामोश रहा।

"दीपक!" केदारनाथ धीरे से चीखे—"तुम खामोश क्यों हो ···यह तुम्हें सांप क्यों सूंघ गया है, तुम बोलते क्यों नहीं···तुम कहते क्यों नहीं कि यह सब झूठ है, फ्रॉड है, षड्यन्त्र है···एक घिनौना षड्यन्त्र।"

दीपक फिर भी खामोश रहा।

"म···मैं चाहता हूं कि झूठ फैले नहीं···किसी को कुछ पता न चले, इसलिए मैं तुम्हें भगवान की सौगन्ध देकर कहता हूं कि शीला का मुआयना करके मुझे बता दो कि यह सब झूठ है···वह झूठ कह रही है···दीपक···दीपक···।" इतना कहते-कहते सेठजी रो पड़े।

दीपक ने धीरे से कहा—"यह सच है सेठजी।"

दीपक का उत्तर सुनकर सेठ केदारनाथ की आंखों के आंसू थम गए और क्रोध से बोले—"ऐसा कभी नहीं हो सकता।"

"यह सच है···यह सच है···!" दीपक ने पागलों की तरह कहा।

"यह पाप तुम्हारा है ?"

"हां।"

"तुम्हारा···!" सेट केदारनाथ ने आश्चर्य से पूछा।

"हां।" दीपक ने दृढ़ स्वर में कहा।

"यदि यह पाप तुम्हारा है तो तुम्हें अभी शीला से शादी करनी पड़ेगी। वरना मेरी बच्ची की जिन्दगी बरबाद हो जाएगी।"

दीपक ने चेहरा ऊपर उठाया और मुस्कराकर बोला—"नहीं···ऐसा कभी नहीं हो सकता···मुझे नफरत है उससे···मैं उससे कभी शादी नहीं कर सकता।"

"दीपक!" सेठ केदारनाथ गुर्राए।

"चीखने की कोशिश मत कीजिए सेठजी···आप ही घाटे में रहेंगे···मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा।"

सेठजी गुस्से में आकर बिफर उठे। उनके होंठों से झाग निकलने लगे···और क्रोध में चिल्लाए—"कमीने···कुत्ते···नीच?"

"संसार में कमीना कौन नहीं है सेठजी। पहले आप अपने गिरेबान में हाथ डालकर देखें। भूल गए अपने आनन्द के कुक···भूल गए उस भोली मासूम लड़की की लाश, जिसे आपके लड़के ने अपनी वासना का शिकार बनाया था।"

"तो तूने मुझसे उस लड़की का बदला लिया है।"

"मैंने नहीं···शायद भगवान ने···क्योंकि अब न जाने क्यों मुझे शीला से नफरत हो गई है जबकि पहले ऐसा नहीं था···मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों हो रहा है। शायद···भगवान की इच्छा है यह···।"

"चुप रह कमीने मैं मुझे जीवित नहीं छोड़ूंगा···मैं तेरी जान ले लूंगा।" यह कहकर सेठजी उस पर झपटे और पागलों की तरह अपनी छड़ी उसके शरीर पर मारने लगे।

दीपक के सिर से खून बहने लगा। पहले तो वह खामोशी से पिटता रहा फिर बोला—"जब पुलिस को मेरी लाश मिलेगी···पूरी दुनिया को पता चल जाएगा कि···।"

केदारनाथ का छड़ी वाला हाथ तुरन्त रुक गया। क्रोध से थर थर कांपते हुए बोले—"ठीक है अब नहीं तो शीला की शादी

बाद तुझे जीवित नहीं छोड़ूंगा कमीने।" इतना कहकर सेठजी बड़बड़ाते हुए बाहर निकल गए।

दीपक ने आस्तीन से अपने माथे पर छलछला आए पसीने को पोंछा जब उसका हाथ नीचे आया तो उसने देखा कि उसकी आस्तीन खून में भीगी हुई थी। इस खून को देखकर उसका दिल भर आया ···और फिर वह फूट-फूटकर रो पड़ा। लेकिन उसके चेहरे पर एक अजीब-सी शान्ति थी। एक अजीब-सा आत्मविश्वास···जो उसके वचन की सफलता की द्योतक था।

° ° °

"म···मैं आ गया हूं शान्तिप्रसाद जी।" सेठ केदारनाथ भर्राई हुई आवाज में बोले—"समय ने एक ऐसी करवट बदली है कि मेरे भाग्य की सारी खुशियां उसके तले दबकर जोर-जोर से कराहने लगी हैं···मैं आ गया हूं इसीलिए कि एक समय था जबकि मैं भूल गया था कि भगवान की लाठी बे आवाज हुआ करती है।"

"तुम किसलिए आए हो?" शान्तिप्रसाद गुर्राए।

केदारनाथ ने हाथ फैलाकर कहा—"म-म···मेरी शीला···म-म मेरी बच्ची···वह···वह···शेखर से शादी करना चाहती है?"

"शेखर मुझसे कह रहा था।"

"उसने ही शीला से कहा था कि म···मैं आपके पास आऊं।"

"सुना है गर्भवती है वह!"

"शान्तिप्रसाद जी!" केदारनाथ की आंखें हैरत से फैल गईं।

"मुझे सब मालूम है···और जानते हैं आप···कि मुझे यह सब कुछ किसने बताया है।"

"क···किसने!"

"डा० दीपक ने।"

"नहीं?" सेठ केदारनाथ ने अविश्वासपूर्ण स्वर में कहा।

"शेखर मुझे उल्लू बना रहा था मगर···खैर अच्छा हुआ कि समय पर मेरी आंखें खुल गईं···मुझे यह रिश्ता मन्जूर नहीं···।"

"श···शान्तिप्रसाद जी, भगवान के लिए मुझ पर दया कीजिए ···मेरी बेटी की लाज···रख लीजिए।"

"मुझे अफसोस है कि मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"यह···य···म···मेरी इज्जत का प्रश्न है।"

"ऐसे ही एक बार आपके सामने मेरी इज्जत का प्रश्न उठ खड़ा हुआ था।"

"भगवान के लिए भूल जाइए लालाजी।"

"भूल जाऊं···यह भूल जाऊं कि इस घर से एक साथ दो-दो···अर्थियां निकली थीं, भूल जाऊं कि मेरी निर्दोष बच्ची को चिता की लकड़ियों तक पहुंचाकर तुम्हारा आनन्द उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैंड चला गया था, भूल जाऊं कि जिस समय मेरे घर में मातम हो रहा था···तुम अपनी कोठी में कहकहे लगा रहे थे···भूल जाऊं कि तुम्हारे आनन्द ने मुझे दुनिया में किसी को मुंह दिखाने के योग्य भी नहीं रखा···।"

"म···मैं आपके पैर पकड़ता हूं शान्तिप्रसाद जी।"

"इससे कुछ नहीं हुआ करता···मैंने भी आपके पैर पकड़े थे···।"

"मुझसे मेरे कमीनेपन का बदला न लीजिए···शान्तिप्रसाद जी···बदला लेने से बड़ी सजा माफ कर देना हुआ करती है।"

"उस समय कहां थे तुम्हारे आदर्श जब मैं तुमसे गिड़गिड़ाकर अपनी इज्जत की भीख मांग रहा था और तुमने मुझे ठोकर मार-मारकर बाहर निकाल दिया था।"

"मेरी अक्ल पर पर्दा पड़ गया था···अन्धा हो गया था मैं।"

"इस समय ऐसा ही मेरे साथ हो गया है···बल्कि अब तो समय आया है कि मैं तुम्हारी पगड़ी उछालूं···संसार को बताऊं कि अब ऊंचे घरानों की लड़कियां कुंआरी मांएं बनने लगी हैं।"

"दया···शान्तिप्रसाद जी भगवान के लिए मुझ पर दया कीजिए।"

"इसी प्रकार एक दिन दया की भीख मैंने भी तुमसे मांगी थी मैंने तुम्हें यहां तक याद दिलाया था कि तुम एक जवान लड़की के बाप हो···मगर उस वक्त···तुम कहकहे लगा रहे थे। तुम्हें याद है तुमने कहा था—वर छीन लेने का यह उपाय बहुत अच्छा है।"

"भूल हो गई थी मुझसे···बुद्धि मारी गई थी मेरी···मैं भूल

गया था कि वह जो ऊपर बैठा हुआ है उसके घर देर है अन्धेर नहीं। आज उसकी वे आवाज लाठी मुझ पर चल गई है···मैं अपने पापों का प्रायश्चित करने तुम्हारे घर आया हूं क्षमा कर दो मुझे···कम से कम यही सोचकर कि सुबह का भूला अगर शाम को घर लौट आए तो उसे भूला नहीं कहते।"

"तुमने मुझे ठोकरें मार-मार कर निकाला था।"

"आप मुझे जूते मार सकते हैं मगर···भगवान के लिए मेरी इज्जत बचा लीजिए···मैं आपके पैर पकड़ता हूं।" यह कहकर केदारनाथ ने शान्तिप्रसाद के पैर पकड़ लिए और वह फूट-फूटकर रोने लगे।

"तुमने तो कहा था कि तुम्हारी लड़की अगर ऐसा करे कि उसके पेट में पाप पलने लगे तो···तो गला घोंट दोगे उसका।"

केदारनाथ ने कोई उत्तर नहीं दिया—दिल हिला देने वाली आवाज में वह फूट-फूटकर रोते ही रहे।

"लम्बे-चौड़े दावे करना बहुत आसान होता है···ऊंचे आदर्शों की दुहाई प्रत्येक मनुष्य दे सकता है मगर अमल···कहां है तुम्हारा वह दावा कि तुम अपनी लड़की का गला घोंट दोगे···समय के निर्दयी हाथों ने उस बड़े बोल का सर नीचा कर दिया है···क्योंकि आज तुम सेठ केदारनाथ नहीं एक अभागिन लड़की के अभागे पिता हो और एक पिता कभी अपनी लड़की का गला नहीं घोंट सकता···एक माली अपने बाग के किसी फूल को कभी मसल नहीं सकता, इसलिए कि अपने खून की आवाज उसे विवश कर देती है···सारे आदर्शों को चकनाचूर कर देती है और अभागा पिता अपनी इज्जत की भीख मांगने किसी के कदमों में गिर पड़ता है···अब फूट-फूटकर क्यों रो रहे हो केदारनाथ···उस अभागे पिता को देखिए और सोचिए कि उस समय उसकी छाती फट क्यों न गई जब उसने अपनी जवान लड़की की चिता को आग लगाई थी···तुम्हारा फूट-फूटकर रोना-गिड़गिड़ाना, पैर पकड़-पकड़कर अपनी इज्जत की भीख मांगना वापस लाकर दे सकता है मुझे मेरी सुधा···तुम कहते हो कि मैं भूल जाऊं तुम्हारे अत्याचार को अवश्य भूल जाऊंगा, मगर क्या मुझे मेरी बच्ची मिल सकती है जिसे मैंने बड़े लाड़-प्यार से पाला था,

जिसके साथ मैंने असंख्य सपने जोड़ रखे थे, सपने जो छत के उस हुक में फंसकर चूर-चूर हो गए थे, जिसमें मेरी बेटी की लाश झूल रही थी।"

फूट-फूटकर रोते हुए सेठजी ने कहा—"ठीक कहते हो शान्तिप्रसाद…ऐसे पाप किए हैं मैंने जिन्हें क्षमा नहीं किया जा सकता… राक्षसों को भी हरा दिया है मैंने…उन पापों के बदले में तुम मेरी जान ले सकते हो…मगर मेरी बच्ची…भगवान के लिए उसका जीवन बचा लो, वह बहुत जिद्दी है…मैं उसे बचपन से जानता हूं… अगर…अगर यह शादी न हुई तो वह भी सुधा की तरह…।"

"मेरे पैर छोड़ दो।"

"न…न…नहीं…मैं इन चरणों को तब तक नहीं छोड़ूंगा जब तक कि आप मुझे क्षमा नहीं कर देते। मैं यहीं सर पटक-पटककर जान दे दूंगा…अगर…अगर…।"

"ठीक है केदारनाथ…तुम पर नहीं मुझे तुम्हारी लड़की पर तरस आता है…सोचता हूं कि ऐसा न हो कि तुम्हें भी मेरी तरह अपनी जवान लड़की की चिता जलानी पड़े।"

केदारनाथ भावावेश में और ज्यादा फूट-फूटकर रोने लगे।

"रोना छोड़ो सेठ केदारनाथ और शादी की तैयारियां करो शीघ्र ही किसी शुभ घड़ी का मुहूर्त निकलवा लीजिए…मैं अपने शेखर की बारात लेकर आऊंगा।"

यह बात सुनकर सेठ केदारनाथ के चेहरे पर प्रसन्नता भरी मुस्कान फैल गई, वह रो भी रहे थे। आंसुओं से भरी उनकी आंखों में पश्चाताप के भाव भी झलक रहे थे।

० ० ०

डा० हरीश कुछ देर तक तो दीपक को आश्चर्य से देखता रहा फिर कहने लगा—"क्या तुम मेरे एक निवेदन पर गम्भीरतापूर्वक विचार करोगे?"

"निवेदन!" दीपक चौंक पड़ा।

"हां।" हरीश ने सर हिलाया।

"बको।"

"मैं तुम्हें इस नगर के सुविख्यात, मानसिक रोगों के विशेषज्ञ डा० कटारिया को दिखाना चाहता हूं।"

बुझी-बुझी-सी मुस्कान दीपक के होंठों पर फैल गई। उसने पूछा —"क्यों !"

"इसलिए कि इन दिनों मैं तुमसे वह सारी हरकतें होते देख रहा हूं जो खतरनाक किस्म के पागल ही कर सकते हैं।"

"जैसे !"

"क्या वह तुम थे जिसने शीला की लाज पर डाका डाला ?"

"हरीश ··!" दीपक चिल्ला उठा।

"क्या वह तुम थे···?" हरीश हाथ उठाकर जोशीले स्वर में पूछने लगा—"जिसने उसे मुहब्बत के सब्ज बाग दिखाकर उसका सब कुछ लूट लिया।"

"हरीश ··हरीश !"

"क्या तुम थे जिसने शीला के साथ मुहब्बत का नाटक रचाया था !"

"तुम्हें यह सब कैसे मालूम हुआ।"

"इसलिए कि मैंने एक पाप किया था···तुम्हारी नज़रों में वह पाप रहा हो मगर मुझ जैसे आदमी की नजरों में वह पाप कोई हैसियत नहीं रखता···और वह पाप यह है कि मैंने छुपकर तुम्हारी और सेठजी की बातचीत सुनी थी।"

दीपक की आंखें आश्चर्य से फैलती चली गईं।

"और मैंने वह सब कुछ सुना था जिसकी मैं सपने में भी आशा नहीं कर सकता था और उसी की रोशनी में मैं तुमसे पूछना चाहता हूं कि क्या वह तुम थे जिसने शीला के साथ धोखेबाजी की !"

"हां ··।" दीपक ने गहरी सांस ली—"वह मैं था।"

"तुम···तुम···?"

"हां···हां···हां···मैं।"

"क्या तुमने मुझे भी केदारनाथ समझ रखा है !"

"क्या मतलब ?" दीपक ने आश्चर्य से पूछा।

"मैं मानता हूं कि उस समय तुम्हारा अभिनय लाजवाब था। मुझे स्वीकार है कि उस समय तुमने एक अच्छे विलेन का पार्ट

निभाया था मगर···यह बाजू मेरे आजमाए हुए हैं।"

"तुम कहना क्या चाहते हो ?"

"यह आज से पांच दिन पहले की बात है जब तुम्हारी और सेठजी की बातचीत मैंने छुपकर सुनी थी और यह पांच दिन···मेरे लिए पांच शताब्दियों के बराबर सिद्ध हुए हैं। हज़ारों-लाखों बार मैंने उन बातों का पोस्ट मार्टम किया है जो मुझे मालूम हुई हैं—फिर मैंने तुम्हारे उस अभिनय पर गौर किया है जो तुमने आज से पांच दिन पूर्व प्रदर्शित किया था और अब—मुझे मानना पड़ा है कि तुम इस शताब्दी के सबसे ज्यादा खतरनाक पागल हो।"

दीपक के अधरों पर जो मुस्कान फैली हुई थी, वह दबे पांव चल रही थी, चलते में लड़खड़ा रही थी, कराह रही थी, रो भी रही थी।

"तुम वह अभागे हो जिसने अपने हाथों अपनी चिता की लकड़ियां इकट्ठी की हैं···दुनिया में लोग तो मर के चिता में जलते हैं···लेकिन तुम वह अभागे हो जो जीते जी चिता में जल रहे हो।"

"तुम वह अभागे हो···जो नदी किनारे बैठकर भी प्यासे हो, तुम वह नाव हो जो तट पर आकर तूफान का नजारा देखने मंझधार की ओर चल पड़ती है और अब बीच मंझधार में है।"

"परन्तु इन सब बातों का तुम्हारे भूगोल पर क्या असर पड़ता है।"

"दीपक—ओ दीपक के बच्चे—मैं तेरा खून पी जाऊंगा—तू आज मेरे भूगोल की बात कर रहा है – तू—जो मेरे बचपन का यार है—जो मेरे साथ कमर पर बस्ता लटकाए स्कूल जाया करता था तू—जिसे मेरी दोस्ती पर गर्व था···तू जो मुझे इंग्लैंड के पते पर रोज एक पत्र लिखा करता था जबकि मेरे माता-पिता भी सप्ताह में एक पत्र से आगे नहीं बढ़ते थे···तू···जो अपना सारा जेब खर्च मुझे भेजे जाने वाले पत्रों पर खर्च कर देता था आज तू मेरे भूगोल की बात कर रहा है।"

"हरीश···मित्रता अपनी जगह पर है···लेकिन अगर तुम मेरी मानसिक स्थिति पर शक करने लगो तो···।"

"मैं तेरा गला भी घोंट सकता हूं।"

"घोंट दे बाबा पीछा तो छोड़ मेरा...।"

"और वह तू है...।" हरीश गुर्राया—"जिसने आज तक एक चिड़िया का बच्चा भी नहीं मारा—जो गैरों की ज़रा-सी तकलीफ पर बिलबिला उठता है। जो इस डर से इंग्लैंड नहीं जाता कि सिद्धांतों पर बुरा प्रभाव न पड़े और डाक्टरी की शिक्षा इसीलिए यहीं पर प्राप्त करता है...जो आज के जमाने का ऋषि और मुनि है...जो अपने निजी खर्च पर गरीबों का इलाज करने जैसी मूर्खता करता है। यदि वह व्यक्ति स्वीकार करे कि वहां उसने एक युवती का शील भंग किया है और अब उसे उस युवती से नफरत है तो...तो मैं उस व्यक्ति को पागल नहीं तो और क्या कहूं।"

"मनुष्य ही तो हूं हरीश मैं...बहक गया था।"

"और अब मैं बहकने जा रहा हूं...मैं समझता हूं...अगर वह शीला की बच्ची तेरी खुशियों को अपने पैरों तले रौंद सकती है तो हरीश उसकी खुशियों को चूर-चूर कर सकता है...मुझे सब कुछ पता चल चुका है दोस्त—आज उसकी शादी हो रही है...उसके घर उसका प्रेमी बारात लेकर जा रहा है...मगर मैं ऐसा नहीं होने दूंगा...लगन मण्डप में उस लड़की को पवित्र अग्नि की परिक्रमा के लिए शेखर की लाश मिलेगी...मैं कभी यह बरदाश्त नहीं कर सकता कि मेरा दोस्त यहां बैठकर गम के आंसू बहाए...और उधर दूसरी तरफ गम देने वाला शेखर...खुशियां मनाए...मैं उसकी सारी खुशियां बरबाद कर दूंगा...।"

"हरीश—!"

"तुम्हारे चीखने से मेरे इरादे नहीं बदल सकते...मैं पिछले पांच दिनों से तुम्हें छुप-छुपकर खून के आंसू रोते देख रहा हूं...मेरे जीवन में यह पहला अवसर है कि मैं तुम्हें लगातार पिछले तीन दिनों से बिना शेव किए आता देख रहा हूं...क्या मैं इतना अधिकार भी नहीं रखता कि तुम मुझे यह बता दो कि आखिर तुमने विष का यह प्याला क्यों पिया!"

"जो बीत गया उसे भूल जाने की कोशिश करो हरीश।"

"अगर तुम मुझे नहीं बताओगे तो आज शेखर को जिन्दा नहीं छोड़ूंगा...क्या हुआ कि मैं उसे पहचानता नहीं...परन्तु जब मैं

शीला के घर पहुंचूंगा तो जो दूल्हा बनकर···।"

"हरीश पागल मत बनो···।"

"पागल मैं नहीं, तुम हो, तुम जिसने भरी थाली पर लात मार दी··· जिसने सेठ केदारनाथ को साफ-साफ मना कर दिया··· आखिर क्यों?"

"म···मेरी मरजी।"

"यह झूठ है।" हरीश ने कहा और अगर तुमने मुझे नहीं बताया तो मैं तुम्हारी ही कसम खाकर कहता हूं कि मैं आज शेखर को जिंदा नहीं छोड़ूंगा।"

"तुम्हें मेरी कसम है हरीश···भगवान के लिए ऐसा न सोचो।"

"मुझे तुम्हारी कसम की परवाह नहीं है।"

"हरीश···हरीश।"

"सब बेकार है दीपक···अगर तुम मुझे सब कुछ सच-सच नहीं बता देते तो···यह देखो मेरा रिवाल्वर।"

"ठीक है।" दीपक खड़ा हो गया—"जाओ और शेखर की हत्या कर दो···परन्तु इसे याद रखो कि जब तुम वापस अपने मित्र के पास आओगे तो यहां तुम्हें मित्र की लाश मिलेगी···लाश जिसके चेहरे पर पश्चाताप के आंसू होंगे···जिसका चेहरा अपनी प्रेमिका की बदनामी और जग हंसाई जैसे संगीन अपराध का अपराधी नजर आ रहा होगा—तुम मेरे मित्र हो हरीश···तुम—जो मेरी मुहब्बत को बदनामी में बदल देना चाहते हो···तुम मेरे वह मित्र हो जो चाहते हो कि कल सवेरे के समाचार पत्र डा० दीपक को एक घृणित पात्र बनाकर प्रस्तुत करें, तुम चाहते हो कि मेरी सारी तपस्या मिट्टी में मिल जाए···तुम चाहते हो कि जहां शहनाई बज रही है वहां मातम छा जाए।"

"और तुम्हारा दिल जो शोकाकुल है···।"

"गोली मारो मेरे दिल को···एक दिल में अन्धेरा है तो क्या हुआ···किसी के घर तो रोशनी हो रही है···दो होंठों को विषपान करना पड़ा तो क्या हुआ आज सैकड़ों होंठों से जाम जो टकरा रहे होंगे। एक चेहरे पर बढ़ी हुई दाढ़ी की स्याही फैल गई तो क्या हुआ आज सैकड़ों चेहरे तो खुशी से खिल उठेंगे।"

"मगर यह अन्याय है।"

"और यह भी तो अन्याय है कि हम पैदा हुए···हम जैसे अभागे ···यह भी तो अन्याय है कि हम जैसों के सीनों में मांस का एक टुकड़ा रखा और क्या यह अन्याय नहीं कि मांस के उस टुकड़े पर हमारा अधिकार भी नहीं रखा गया···?"

"दीपक···।" हरीश कराह उठा।

"आज मैं बहुत उदास हूं हरीश···भगवान के लिए मेरे घावों को छेड़ने की कोशिश मत करो···तुम मेरे मित्र हो तुम्हें तो आज किसी न किसी तरह मेरा मन बहलाना चाहिए।"

"केवल इतना बता दो कि तुमने केदारनाथ के सामने शादी से इनकार क्यों किया?"

दीपक ने मुस्कराकर कहा—"उसने आज्ञा दी थी।"

हरीश की आंखें सजल हो उठीं। वह भीगी-भीगी आंखों से अपने बचपन के मित्र को देखने लगा जिसके सुन्दर मुखड़े पर बढ़ी हुई दाढ़ी की स्याही फैली हुई थी। ऐनक के मोटे शीशों के पीछे जिसकी आंखें जल रही थीं। वह भर्राई हुई आवाज में बोला—"दीपक!"

"हूं।"

"बहुत ज्यादा उदास हो!"

"हां।" दीपक मुस्कराया।

"उस बेवफा के लिए?"

"हां।" दीपक ने कहा—"इसलिए कि मैं वह खेत हूं जिसे स्वयं अपनी बाढ़ खा गई।"

"उसे भूल क्यों नहीं जाते?"

"कोशिश करूंगा।"

"यह आरोप अपने सर क्यों लिया कि वह तुम थे जिसने शीला का शील भंग किया।"

"इस सिलसिले में मैं कुछ नहीं कहूंगा।"

"क्यों?"

"बस।"

"वचन दिया होगा ना उसे···पूरे गधे जो ठहरे।"

"तुम कुछ भी सोचते रहो।"
"बुद्धि है मेरे पास भी।"
"मुझे कब इनकार है।"
"ठोकर खाई है तो कम से कम अब तो संभल जाओ।"
"क्या मतलब ?"
"हरीश तुम्हारे लिए सैकड़ों शीलाएं उपलब्ध कर सकता है।"
"मुझे जरूरत नहीं है।"
"क्या अब भी तुम्हें यकीन नहीं आया कि नारी का दूसरा नाम बेवफाई है।"
"नहीं।"
"क्यों ?"
"अगर शीला मेरे साथ विवाह पर राजी हो जाती तो मैं चीख-चीख कर कह देता कि नारी का दूसरा नाम बेवफाई है। गलती तो मेरी है हरीश···मेरे पागल मन ने वह वस्तु पसन्द की जो पहले ही किसी और की हो चुकी थी।"
"क्या-क्या नमूने बनाए हैं भगवान ने।" हरीश ने यह कहकर अपना सर पीट लिया।
"एक वक्त आएगा कि मैं इस नमूने को भी देखूंगा।" दीपक ने हरीश की ओर उंगली उठाकर कहा—"तुम जो हर कली पर भ्रमर की भांति मंडराते रहते हो···आखिर कभी न कभी तो चोट खाओगे ही।"
"वह दिन कभी नहीं आएगा दीपक।"
"देखते रहो।"
"अच्छा खड़े हो जाओ···रात हो गई है···इन अंधेरों से निकलो ···मैं तुम्हें उजाले में ले जाऊंगा।"
"कहां ?"
"क्लब में···परन्तु पहले शेव बनाओ।"
"क्या जरूरत है ?"
"क्या इस प्रकार तुम्हारी मुहब्बत की बदनामी नहीं होगी? तुम जो मार्डन मजनूं का-सा रूप धारे बैठे हो।"
"अच्छा बाबा शेव बना लेता हूं लेकिन क्लब में क्यों ले जा

रहे हो ?"

"तुम्हारा दिल बहलाने।"

"दिल···वहां शराब भी तो मिलती है ना हरीश।"

हरीश उछल पड़ा और आश्चर्य से दीपक को देखने लगा।

"चकित क्यों रह गए ?"

"तुम···तुम शराब पिओगे ?"

"हां···बहुत सुना है कि आदमी गम भूल जाता है इसे पीकर··· सोचता हूं आज मैं भी आजमा लूं।"

"जरूर···जल्दी से तैयार हो जाओ।" हरीश ने कहा।

दीपक शेविंग की तैयारी करने लगा।

हरीश ने सिगरेट सुलगाया और दीपक कमरे में टहलने लगा। साथ ही वह गुनगुनाता जा रहा था। टहलते-टहलते उसकी नजरें दीपक के गाउन पर पड़ीं। वहां से एक बड़ा लिफाफा झांक रहा था। उसने आगे बढ़कर लिफाफा निकाल लिया। यह शादी के कार्ड वाला लिफाफा था। लिफाफे पर केवल "दीपक" लिखा था।

जब उसने कार्ड बाहर निकाला तो चौंक पड़ा। यह शीला और शेखर की शादी का कार्ड था और उसके पीछे लिखा था—

दीपक बाबू !

अपनी शादी का कार्ड भेज रही हूं। मुझे मालूम है कि किसी और ने तो आपको कार्ड भेजा नहीं होगा। मुझे भी नहीं भेजना चाहिए था। लेकिन जब दिल न माना तो भेज रही हूं।

मुझे मालूम है आप नहीं आएंगे। आपको आना भी नहीं चाहिए, रहा यह कार्ड, तो मैंने इसे केवल इसलिए भेजा है कि आपको मालूम हो जाए कि···कि आपका बलिदान व्यर्थ नहीं गया। जब आपके बारे में सोचती हूं तो न जाने क्यों अपने आपसे शर्म-सी महसूस होती है। मैं नहीं जानती कि ऐसा क्यों होता है। बहरहाल क्या आप मुझे उस ज्यादती के लिए क्षमा कर देंगे जो मैंने आपके साथ की !

जब मैं आकाश की ओर देखती हूं तो आप मुझे याद आ जाते हैं। आप इतने ही ऊंचे तो है। कोई मुझसे पूछे कि देवता किसे कहते हैं। मैं झट आपकी ओर संकेत कर दूंगी। क्योंकि

देवता ही तो ऐसा कर सकते हैं, जो आपने किया।

यह जो ढेर सारी खुशियां हैं···यह जो मेरी जीत है और यह जो हर तरफ सब कुछ ठीक-ठाक है आपके कारण ही तो है और इसमें मेरा जो घिनौना पार्ट है, क्या आप मुझे उसके लिए क्षमा कर सकेंगे ? मैंने सुना है देवता उन्हें क्षमा कर देते हैं जो दिल से अपने पापों की क्षमा मांगे।

दोषी—शीला

गहरी सांस लेते समय हरीश ने महसूस किया कि उसकी आंखों के किनारे गीले हो चुके हैं।

उधर अटेच बाथरूम में दीपक शेविंग करता हुआ उर्दू की एक कविता गुनगुना रहा था—

"कता कीजिए न ताल्लुक हम से।
कुछ नहीं है तो अदावत ही सही ॥
हम भी दुश्मन तो नहीं हैं अपने।
गैर को तुझ से मुहब्बत ही सही ॥
इश्क मुझको न सही वहशत ही सही।"

हरीश मुस्कराने लगा—परन्तु उसकी यह मुस्कराहट पागलों की तरह थी।

फिर काफी देर बाद जब वह उसे अपनी कार में बराबर वाली सीट पर बिठाकर कार ड्राईव करने लगा तो दीपक ने कहा—"सीलिंग लाइट बुझा दो ना।"

"क्यों ?"

"ऐसे ही।"

"इस नन्हीं-सी रोशनी ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?"

"उजाले से नफरत-सी हो गई है···जिसकी जिन्दगी में ही अंधेरे लिख दिये गए हों···उसे उजाले में क्या सरोकार···मन करता है कि बस हर समय अंधेरों में ही रहूं।"

"और वहां क्लब में जो ढेर सारी रोशनियां होंगी तो क्या उन्हें भी बुझवा दोगे।"

"काश बुझवा सकता···काश सारे नगर के चिराग बुझवा सकता···क्योंकि वह जो किसी कवि ने कहा है ना—खुशी की रात

में क्या काम जलने वालों का।"

"लो मैं इस नन्हीं-सी रोशनी का खून तो किये ही देता हूं।" यह कहकर हरीश ने कार की सीलिंग लाइट आफ कर दी···। दीपक ने सीट की पुश्त से टेक लगाकर नेत्र मूंद लिए और बोला—"वैसे क्लब में···शराब के नशे में मैं उन रोशनियों को सहन कर जाऊंगा।"

हरीश कुछ नहीं बोला—उसने केवल इतना किया कि कार की स्पीड बढ़ा दी।

दीपक आंखें बन्द किये अपने विचारों में खोया रहा।

बाहर से आने वाली आवाज़ों से उसे पता चलता रहा कि अब कार नगर की सुशोभित सड़कों से गुज़र रही है। एक जगह उसकी बन्द आंखों के सामने बहुत से नीले-पीले धब्बे चकराने लगे। कार भी रुक-सी गई थी।

"हरीश!" उसने अंधों की तरह आंखें बन्द किये-किये ही हरीश को आवाज़ दी—क्योंकि आंखें बन्द किये-किये उसे बड़ी शान्ति मिल रही थी।

"हूं।"

"यह रोशनी कैसी है···?"

"गैस के असंख्य हन्डों की है।"

"यह कार क्यों रुक गई?"

"किसी की बरात आ रही है।"

"और यह झंकार···यह शोर!"

"दूल्हे पर सिक्के उछाले जा रहे हैं···बच्चे धरती पर गिरने वाले सिक्कों की छीना-झपटी कर रहे हैं।"

"बहुत लम्बी बरात है···रोशनी खत्म होने में नहीं आती है।"

"हां···अरे, दीपक देखो···उफ···दूल्हा कितना सुन्दर है। मैं कहता हूं जिससे उसकी शादी हो रही है उसका तो भाग्य खुल गया।"

दीपक ने आंखें खोल दीं—उसने देखा कि दूल्हे का घोड़ा कार के समीप आता जा रहा है। अचानक वह तड़प उठा। उसकी जलती हुई आंखें सिकुड़ीं, फिर उनमें ढेर सारा पानी नज़र आने

लगा। वह पागलों की तरह अपनी जेबें टटोलता हुआ बोला—"हरीश !"

"हूं।"

"तुम्हारी जेब में कुछ रेजगारी है।"

"हां•••मगर क्यों ?"

"मुझे दो।"

"परन्तु किसलिए ?" हरीश ने उसे रेजगारी देते हुए पूछा।

दीपक ने कोई उत्तर नहीं दिया—सारे सिक्के मुट्ठी में भर लिए उसने और जब दूल्हे का घोड़ा करीब से गुजरने लगा तो उसने खिड़की से हाथ बाहर निकालकर सिक्के दूल्हे पर उछाल दिये और भर्राई आवाज में बोला—"शादी मुबारक हो शेखर।" और इतना कहते-कहते वह रो पड़ा।

"•••द•••द•••दी•••पक !"

"हां हरीश•••।" दीपक बोला—वह इस प्रकार गहरी-गहरी सांसें ले रहा था जैसे बड़ी दूर से भागकर आया हो।

"यह तुमने क्या किया।" उसने दीपक की आंखों से निकलते हुए आंसुओं को देखते हुए कहा।

"क्या किया है मैंने•••दूल्हे पर सिक्के ही तो उछाले हैं।"

हरीश ने चकित मुद्रा में दूल्हे को देखा—वह किसी दूसरी तरफ आकर्षित था तथा मुस्करा रहा था।

हरीश ने पूछा—"कक•••क्या•••क्या यह शेखर है !"

बहते हुए आंसुओं को रोकने की कोशिश में दीपक का चेहरा बिगड़ रहा था। हरीश के कंधे पर अपना माथा टिकाकर बोला—"हां•••हरीश•••हां•••।" फिर वह फूट-फूटकर रोने लगा। रोते-रोते उसने कहा—"तुम इस रास्ते से क्यों आए हरीश•••तुम्हें इस रास्ते से नहीं आना चाहिए था मेरे दोस्त।"

गैस की लालटेनों की बाढ़-सी उमड़ी चली आ रही थी। कितनी लम्बी बारात थी—कार फंसकर रह गई थी—कहीं रास्ता भी तो नहीं था।

० ० ०

एक बार फिर शान्ति भवन के चेहरे पर वैसी ही खुशी फैल गई थी। पूरा शान्ति भवन दुल्हन बना मुस्करा रहा था और शान्ति भवन का युवा मालिक शेखर सीढ़ियां चढ़कर उस कमरे की तरफ जा रहा था जहां एक लाल गठरी बनी दुल्हन उसकी प्रतीक्षा में थी जैसे ही सीढ़ियां पार करके वह गैलरी में आया। एक छड़ी ने उसका रास्ता रोक लिया। वह आश्चर्य से लगभग चीख उठा—"पिताजी आप !"

"हां···मैं···।" शान्तिप्रसाद की तेज और चुभती हुई आंखों ने उसे ध्यानपूर्वक देखा।

"कहिये पिताजी।"

"तुम उस कमरे में जा रहे हो जहां तुम्हारी दुल्हन प्रतीक्षा कर रही है।"

"ज···जी।"

"बूढ़े बाप ने तुम्हारा रास्ता रोक लिया है।"

"प···पिताजी···।"

"क्यों ?"

"म···मैं···।"

"केवल इसलिए कि तुम भूल न जाओ···तुम्हें याद रहे कि दुल्हन के कमरे के करीब ही एक और कमरा भी है। एक कमरा जिसकी छत के हुक से लटक कर तुम्हारी मासूम बहन ने आत्म-हत्या की थी तुम्हारी मां जिसकी आंखें छत के हुक से लटकी हुई अपनी जवान बेटी की लाश देखते-देखते पथरा गई थीं।

यह बूढ़ा बाप तुम्हें बताना चाहता है कि कहीं तुम उस बद-नसीब कमरे को न भूल जाओ···सुन्दर दुल्हन पाकर तुम उन अर्थियों को न भूल जाओ जिन्हें शान्ति भवन की एक-एक ईंट ने दुःखी दिल के साथ विदा किया था···।"

"प···पिताजी !"

"आज···केवल यह बूढ़ा बाप ही नहीं, बल्कि शान्ति भवन की एक-एक ईंट की निगाहें तुम पर लगी हुई हैं···यहां की एक-एक ईंट चीख-चीखकर कह रही है···शेखर महीनों पहले हमने

खून के आंसू बहाये थे, अत्याचार हुआ था हमारे साथ···उसे भूल न जाना।"

"म···मुझे सब कुछ याद है पिताजी।"

"श···शेखर···।"

"मुझ पर विश्वास कीजिए पिताजी···मुझे सब याद है··· सब कुछ।"

"तो जाओ···मुहब्बत की भूखी उस दुल्हन पर जुल्म का पहाड़ बनकर टूट पड़ो···उससे एक भयानक इन्तकाम का सिलसिला शुरू कर दो···एक ऐसा इन्तकाम जिसकी कल्पना करके ही उसके कमीने भाई के रोंगटे खड़े हो जायें।"

"ऐसा ही होगा पिताजी।"

"मुझे तुम पर विश्वास है।"

° ° °

"नहीं दीपक, अब बस करो।" हरीश ने उसका हाथ रोकते हुए कहा।

"क्यों?"

"बहुत हो चुका···तुम अब तक दो पैग ले चुके हो···नये-नये हो···और ज्यादा सहन नहीं कर सकोगे।"

"परीक्षा लेना चाहते हो मेरी···देखना चाहते हो कि सहन-शक्ति कितनी है मेरी!"

"नहीं···मैं नहीं देखना चाहता···।"

"तो फिर कंजूसी मत करो···बिल का पेमेन्ट मैं कर दूंगा।"

"तमाचा मार दूंगा ज्यादा बकवास की तो···।" हरीश गुर्राया—"क्या बिल तुमसे ज्यादा प्यारा है। सारी दौलत तुम पर लुटा सकता हूं समझे!"

"तो फिर हाथ मत रोको···बहुत कुछ सहन कर लिया है जीवन में···विष के घूंट पिए हैं···कदम-कदम पर अपनी ही लाश अपने कंधों पर उठाकर न जाने कितनी यात्रा की है मैंने और सितम तो यह है कि मुस्कराता रहा हूं···तुम सहन की बात करते हो।"

हरीश ने हाथ खींचा और चिंतित नज़रों से उसे देखने लगा।

"तुमने कहा था दूल्हा कितना सुन्दर है···आ हा···हा···हा ···वह जालिम है ही सुन्दर···तभी तो उसने मेरी शीला पर जादू कर रखा है···उसके इशारों पर नाचती है। कठपुतली बनकर रह गई है उसके हाथों में···।"

हरीश कुछ क्षणों तक उसे देखता रहा फिर बोला—"दीपक!"

"हूं।"

"मैंने तुम्हारे गाऊन की जेब में वह कार्ड देखा था।"

"कार्ड···!" दीपक उछल पड़ा।

"हां···वह जो शीला ने तुम्हें भेजा था।"

"क्यों देखा था तुमने।" दीपक गुर्राया।

"आदत से मजबूर जो ठहरा।"

"इसका ज़िकर किसी से नहीं करना···।"

"नहीं करूंगा···मगर···मगर···।"

"हां···हां कहो।"

"तुमने बधाई का संदेश भेजा।"

दीपक मुस्कराने लगा—फिर उसने स्वीकृति में गरदन हिलाई।

"उसे क्षमा भी कर दिया।"

"हां।"

"क्यों?"

"बस ऐसे ही कर दिया। वैसे तुमने उसकी ज्यादती देखी!"

"क्या?"

"जालिम ने शादी का कार्ड भेजा तो भी कुछ न कुछ मांग ही लिया।"

"और तुमने दे दिया?"

"हां।"

"उसने तुम्हें रिश्वत भी तो दी थी।"

"रिश्वत···हां···उसने मुझे देवता कहा···कैसा मजाक उड़ाया है मेरा।"

"बात तो ठीक ही लिखी है उसने लेकिन उस बात ने रिश्वत का रूप धारण कर लिया है।"

"देवता।" दीपक ने हल्का-सा कहकहा लगाया—"क्लब में

बैठकर शराब पीने वाला देवता···मेरे लिए पैग तैयार करो हरीश —बारह बज रहे हैं। वह सुर्ख वस्त्रों में लिपटी शेखर की गोद में मुस्करा रही होगी···वह···मेरी नाकाम मुहब्बत···और तुम्हारा पैग···हम दोनों उसकी शादी की खुशी में अपने गिलास टकरायेंगे···और···तुम बताओ क्या इस समय वह मुस्करा नहीं रही होगी!"

• • •

वह घुटनों में मुंह दिये सिसक रही थी।

और शेखर पलंग के सामने टहलता हुआ गुर्रा रहा था—"वह सब नाटक था···फ्रॉड···मुझे तुमसे नफरत है गहरी और सख्त नफरत···क्योंकि बराबर में ही वह कमरा है जहां मेरी बहन ने अपने जीवित शरीर को हुक में लटका दिया था ताकि वह एक झूलती हुई लाश में बदल जाए···मुझे सब कुछ याद है और अब भी···मैं गिन-गिनकर तुम से बदले लूंगा···मैं तुम्हें जी भर कर तड़पाऊंगा···दुनिया तुम्हें सुहागिन कहेगी मगर तुम सुहागिन न होगी···तुम्हें दुल्हन कहा जाएगा मगर···तुम्हारे सारे अरमान, सारी खुशियां इन पैरों तले रौंद दी जाएंगी।" शेखर ने अपने जूतों की ओर संकेत करके कहा।

शीला सिसकती रही।

"खूब दिल खोलकर रोओ···क्योंकि अब तुम्हारे भाग्य में आंसू···और केवल आंसू लिखे हैं।"

इतना कहकर शेखर ने शेरवानी उतारी और सोफे पर लेट गया। उसने सोफे के हत्थे पर सर रखकर आंखें बन्द कर लीं।

काफी देर तक शीला सिसकती रही। फिर उठी—धीरे-धीरे चलती हुई वह शेखर तक पहुंची और धरती पर बैठकर उसके जूतों के बन्द खोलने लगी। शेखर ने अपना पैर खींच लिया और गुर्राया—"क्यों आई हो यहां!"

"आराम से वहां लेट जाइए, पलंग पर···।"

"मैं धरती पर लेट जाऊंगी।"

"अवश्य लेटो···मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी···मगर मुझसे

दूर रहो।"

"केवल आपके जूते ही तो खोल रही हूं जी।"

"मैं इसे सहन नहीं कर सकता···कि तुम मेरे करीब आओ।"

"मेरा दोष क्या है।"

"दोष!" शेखर ने हलका-सा कहकहा लगाया—"तुम्हारा दिल जानता होगा और मैं केवल इतना कह सकता हूं कि मुझे तुमसे बड़ी सख्त नफरत है।"

"मगर मुझे तो नफरत नहीं है···मुझे तो···।"

शेखर उसके ठोकर मारकर गुर्राया—"मत परेशान करो।"

ठोकर भरपूर थी और शीला के चेहरे पर पड़ी थी। उसके होंठों से खून बहने लगा।

शेखर एक झटके के साथ खड़ा हो गया और पलंग पर जाकर लेट गया। उसने जूते उतारने की जरूरत भी महसूस नहीं की।

एक रात की दुल्हन अपनी जगह से उठी। उसने अपनी साड़ी से होंठों का खून साफ किया। कपड़ा गीला करके होंठों पर रखा ताकि खून रुक जाए। फिर वह घुटनों में सर दिए फर्श पर बैठ गई। बहुत देर तक उसी तरह बैठी रही। आज उसकी सुहागरात थी कितने अरमानों से उसने प्रतीक्षा की थी इस रात की।

सामने पलंग पर उसका सुहाग लेटा हुआ था—अब तो वह खर्राटे लेने लगा था।

शीला ने जब अपनी ससुराल में पांव रखा था तो मन ही मन उसने निश्चय कर लिया था कि अब वह इसी घर में जियेगी और इसी घर में मर जाएगी। पति चाहे पत्नी पर कितने ही अत्याचार करे पति की सेवा ही करना पत्नी का धर्म है यह सोचकर वह धीरे से उठी और धीरे से उसने उसके जूते उतारे—उसे लिहाफ उड़ाया फिर नीचे फर्श पर इस तरह बैठ गई कि उसका सर उसके देवता के पैरों में था। उसने पलंग के पाए से टेक लगा रखी थी। जब उसे जोर से सर्दी लगने लगी तो उसने लाल साड़ी को कसकर शरीर से लपेट लिया।

° ° °

जब हाथ में थामा हुआ पैग भी दीपक ने खत्म कर दिया तो हरीश ने कहा—"अब तो बस करो यार।"

"हूं···।" दीपक की आवाज लड़खड़ाने लगी—"अब नहीं लूंगा।"

"शुक्र है।"

दीपक मुस्कराने लगा, फिर बोला—"शाम तक होंठों पर यह शेर था—कौन होता है बुरे वक्त की हालत का शरीक।

मरते दम आंख को देखा है कि फिर जाती है ॥

लेकिन अब···तुम जैसा मित्र मिल गया तो जैसे मुझे नई शक्ति मिल गई हो···तुमने मुझे बहुत सहारा दिया है हरीश।"

"मैं तुम्हें हसीन सहारे भी दे सकता है यदि तुम सुधरने का वचन दो।"

"हसीन सहारे···!"

"हां।"

"मैं समझा नहीं।"

"वह सामने देखो···कोने वाली मेज पर···वह सुन्दर युवती ···तुम जानते हो उसे ?"

"नहीं।"

"नीलम है उसका नाम।"

"लेडी डाक्टर नीलम ?"

"हां।"

"नाम तो सुना था और मेरा ख्याल था कि उसकी आयु काफी रही होगी, मगर यह तो···।"

"बिल्कुल जवान है।" हरीश मुस्कराया—"तुम्हें बड़ी देर से देख रही है···भरपूर दिलचस्पी के साथ।"

"फिर।"

"आओ···मैं तुम्हारा परिचय करा दूं उससे।"

"जरूरत नहीं है।"

"क्यों ?"

"मनुष्य जीवन में केवल एक बार प्यार करता है।"

"झख मारता है वह, फिर विष खाकर आत्महत्या कर लेता है और दुनिया उसे मजनूं के नाम से याद करने लगती है···क्या तुम्हारा भी यही प्रोग्राम है।"

"फिलहाल तो नहीं।"

"फिर···।" हरीश ने पूछा—"नीलम में क्या बुराई है।"

"जिन आंखों ने हीरे को देखा है उन्हें नीलम से क्या दिलचस्पी होगी।"

"अबे ओ जौहरी की सन्तान···होश में आ जा।"

"बेहोश हुआ ही कब था।"

"हालत तो यह है आपकी कि ठीक से बैठा नहीं जा रहा है।"

"परन्तु जबान नहीं बहकेगी···दिल नहीं डगमगाएगा।"

"अरे यार जवानी तो हम पर भी आई है।"

"फिर···।"

"परन्तु हमने इस प्रकार मजनूं और फरहाद की बराबरी नहीं की।"

"ऊंट अभी पहाड़ के नीचे से नहीं गुजरा है।"

"खैर यह तो निश्चित है कि मैं बहस में तुमसे कभी नहीं जीत सकता···।"

"हथियार डाल दिये!"

"हां।"

"तो फिर अब खामोश रहो।"

"एक बात का फैसला हो जाना चाहिए···।"

"किस बात का···।"

"यदि तुम्हें औरतों में दिलचस्पी नहीं लेनी तो तुम आईन्दा क्लब में नहीं आओगे।"

"क्यों?"

"तुम्हारी उपस्थिति में मैं स्वयं को भी गधा समझने लगता हूं···आज मैं किसी भी सुन्दरी से बात नहीं कर सका हूं।"

"और यह मेरी वजह से हुआ है।"

"हां।"

"लेकिन मैंने तो तुम पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया।"

"प्रतिबन्ध लगाने के लिए लठ वगैरा लेने की जरूरत नहीं पड़ती। वैसे अब तुम शीला का ख्याल छोड़ क्यों नहीं देते।"

"क्यों छोड़ दूं ?"

"जाहिर है कि अब वह तुम्हें मिलने से तो रही।"

"तो क्या मुहब्बत इसलिए की जाती है कि···।"

"इसलिए भी नहीं की जाती कि किसी की पत्नी पर नजर रखी जाये।"

"क्या मतलब ?"

"अब वह किसी की पत्नी है—उन घिसे-पिटे सिद्धान्तों के अनुसार जिन पर तुम भी चलते हो इसके लिए किसी दूसरे के बारे में सोचना भी पाप है।"

"मैं कब कहता हूं कि वह मेरे लिये सोचे।"

"मगर तुम···?"

"मेरे सोचने से कोई फर्क नहीं पड़ता···मैं जो कुछ करता हूं यह मेरा अपना काम है।"

"तो तुम उसका ख्याल नहीं छोड़ोगे···?"

"नहीं।"

"कभी भी नहीं।"

हरीश ध्यानपूर्वक उसे देखता रहा—फिर पूछने लगा—"अगर मैं ऐसे हालात पैदा कर दूं कि तुम दोनों का मिलन हो जाए तो···।"

"अब मुझे सोचना पड़ रहा है कि तुम्हारा दिमाग तो खराब नहीं हो गया।"

"मैं गम्भीर हूं।"

"खामोश रहो···अभी मैं होश में हूं···यह तुम्हारी गलतफहमी है कि मैं होश खो चुका हूं।"

हरीश उसे देखता रहा। यह हकीकत थी कि वह गम्भीर था। गम्भीरतापूर्वक वह सोच रहा था कि अगर ऐसे हालात पैदा किये जाएं कि शीला और दीपक का मिलन हो जाए तो···?

० ० ०

अगले रोज सुबह पांच बजे शीला को लगा...जैसे रसोईघर में कुछ खटपट हो रही है।

वह उठी। उठकर रसोईघर में जा पहुंची। रामू काका खड़े थे।

"क्या बात है...।"

"लालाजी को सुबह-सुबह चाय पीने की आदत है।"

"लाओ मैं बनाये देती हूं।"

"अरे नहीं बहूरानी, इतनी जल्दी भी क्या है...अभी तो तुम्हारे हाथों की मेंहदी का रंग भी फीका नहीं पड़ा और फिर मेरे होते हुए मेरी बहूरानी को तकलीफ करने की क्या जरूरत है।"

"बात यह है रामू काका कि एक न एक दिन तो घर का काम-काज सम्भालना ही है फिर अभी से ही सम्भाल लूं तो क्या हर्ज है। और मेरी यह इच्छा है कि पिताजी के पास मैं स्वयं अपने हाथों से बनी चाय लेकर जाऊं।"

इतना कहकर शीला अपने सिर के आंचल को ठीक करते हुए —चाय की ट्रे लेकर अपने ससुर के शयन कक्ष की तरफ बढ़ गई।

"कौन ?" शान्तिप्रसाद ने आश्चर्य से पूछा।

दरवाजा खुला—पहले चाय की ट्रे नजर आई—फिर चाय लाने वाली—वह शीला थी, अपना चेहरा घूंघट में छुपाए। आदर-पूर्वक उसने कहा—"मैं हूं पिताजी...चाय लाई थी।"

शान्तिप्रसाद के चेहरे पर नफरत के भाव फैल गये परन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपनी हालत पर काबू पा लिया और बोले—"मगर इतने सवेरे...अभी तो साढ़े पांच बजे हैं...तुम कब सोकर उठी थीं।"

"प...पांच बजे...।"

"मगर चाय तुमने क्यों बनाई...रामू काका कहां है।"

"वह किचन में हैं।" यह कहकर शीला ने ट्रे गोल मेज पर रख दी और शान्तिप्रसाद के चरण छुए।

"हूं...ठीक है...।" शान्तिप्रसाद गुर्राए—उन्होंने दुल्हन को आशीर्वाद भी नहीं दिया।

शीला उनके लिए चाय बनाने लगी।

"शुगर केवल एक चमचा···।" वह गुर्राए।

"मुझे मालूम है पिताजी।"

"मुझे पिताजी न कहा करो।"

"ज···जी···।" शीला चौंक पड़ी—चमचा उसके हाथ से छूटकर नीचे गिर गया।

"हां···मुझे पसन्द नहीं है। पिताजी के नाम से सुधा याद आ जाती है मुझे, मेरी मासूम बच्ची···जिसे तुम्हारे भाई ने चिता की राख में बदल दिया।"

शीला के मस्तिष्क पर सन्नाटा-सा छा गया—बड़ी मुश्किल से वह अपने आप पर काबू पा सकी—फिर वह चाय बनाने लगी।

शान्तिप्रसाद ध्यानपूर्वक उसकी एक-एक हरकत देख रहे थे। जब वह चाय की प्याली उनकी ओर बढ़ाने लगी तो घूंघट की ओट से उन्हें शीला का सूजा हुआ होंठ नज़र आया।

"यह तुम्हारे होंठ को क्या हुआ ?" उन्होंने पूछा।

"ज···जी···वह।"

"बताती क्यों नहीं···।"

"चोट लग गई थी···।"

"किस तरह ?"

"ग···गिर पड़ी थी मैं।"

शान्तिप्रसाद समझ गये कि वह झूठ बोल रही है। उन्हें यकीन हो गया कि यह चोट शेखर का उपहार है नई दुल्हन को—इस विचार के आते ही उनका रोम-रोम खुशी से खिल उठा।

चाय का एक घूंट भरकर उन्होंने बुरा-सा मुंह बनाया। फिर पूछने लगे—"चाय किसने बनाई है ?"

"म···मैंने।"

"च···च···क्या तुम्हारे मां-बाप ने तुम्हें चाय बनानी भी नहीं सिखाई ?"

शीला का दिल तड़प उठा। चेहरा बिगड़ने लगा। बड़ी कठिनाई से उसने अपने आंसुओं पर काबू पाया।

"क्या बहरी हो ?"

"ज···जी।"

"मेरी बात का उत्तर नहीं दिया ?"

"म···मां को देखा ही नहीं जब से होश संभाला है। रह गए पिताजी तो वह क्या सिखाते···गलती हो गई···क्षमा कर दीजिए ···अब नहीं होगी।"

"जा सकती हो तुम।"

शीला खड़ी हो गई। उसने एक बार फिर शान्तिप्रसाद के पैर छुए और बाहर निकल गई।

किचन में पहुंचकर वह हांफने लगी। फिर पटरे पर बैठ कर गहरी-गहरी सांसें लेने लगी।

बूढ़े नौकर—रामू काका ने आश्चर्य से उसे देखा फिर बोला—"क्या बात है बहूरानी ?"

"आं···कुछ नहीं।"

"परेशान-सी नजर आ रही हैं आप।"

"न···नहीं तो।"

"लालाजी तो खुश हो गए होंगे जब आप चाय लेकर पहुंची होंगीं ?"

"हां-हां वह बहुत खुश हुए।"

"खुशी की बात ही है। मैं तो कहूंगा भगवान सबके बेटों को ऐसी बहू दे···कभी न देखा न सुना कि एक रात की दुल्हन दूसरे दिन मुंह अन्धेरे ही अपनी ससुराल वालों की सेवा में जुट जाए। मैं तो कहूंगा कि देवी भेजी है भगवान ने इस घर में।"

"यह बात नहीं···मैंने जो कुछ किया मेरा कर्त्तव्य था।"

"आजकल कौन समझता है अपना कर्त्तव्य बहू···कौन इतने सवेरे उठता है। हमने तो यही देखा है कि आजकल की लड़कियां आठ-आठ बजे तक पड़ी सोती रहती हैं···शादी हुए महीनों गुजर जाते हैं···मगर चूल्हे-चौकों में जाने का नाम नहीं लेतीं।"

"सब एक जैसी तो नहीं होतीं और हां काका वह रोजाना सात बजे सोकर उठते हैं ना।"

"कौन ?" रामू काका को मजाक सूझा।

"वही।"

"वही का कोई नाम हो होगा ना बहू।"

शीला ने शर्माकर सर झुका लिया।

"ओह अब समझा···छोटे साब···तो क्या उन्होंने आपको नहीं बताया?"

"वह···वह···वह···।"

"सात बजे ही सोकर उठते हैं वह।"

"परन्तु उस समय तक तो सारे मेहमान भी जाग जायेंगे।"

"फिर?"

"तुम ऐसा करना काका···सात बजे चाय की ट्रे मुझे उनके कमरे में दे देना।"

"अच्छा बहू अच्छा···मगर तुम तो चाय पी लो।"

"नहीं, अभी नहीं।"

"ओ! मैं समझा···छोटे साब के साथ पियोगी।"

"हां।" शीला ने धीरे से कहा—"तुम पी लो।"

"मैंने तो अपने लिए बना ली है।" रामू काका ने प्याले की तरफ इशारा किया—"उफ···कितनी ठंड है···क्या आप अपने घर में भी इतने सवेरे उठ जाया करती थीं?"

"नहीं।"

"फिर किस समय उठा करती थीं?"

"सात बजे।"

"तो यहां इतनी जल्दी क्यों?"

"अगर मैं न उठूंगी तो पिताजी को और उन्हें नाश्ता कौन देगा?"

"मैं जो हूं।"

"फिर भी अच्छा नहीं लगता काका।"

"लेकिन यह भी तो अच्छा नहीं लगता बहू···कि मेंहदी का रंग भी फीका न पड़े और बहू घर के सारे काम-काज में लग जाए।"

शीला मुस्करा कर रह गई। फिर पूछने लगी—"चाय कैसी बनी है···?"

"बहुत अच्छी।"

"मुंह देखी बात कर रहे हो।"

"भगवान की कसम बहू…बहुत मजेदार चाय है।"

शीला ने दिल ही दिल में अपने आप से पूछा—"पिताजी को चाय पसन्द क्यों नहीं आई ?"

"बहू कमरे में चली जाओ…मेहमान उठने वाले होंगे।"

"हूं…अच्छा।" शीला ने कहा और खड़ी हो गई। जब वह किचन से बाहर निकली तो लॉन की क्यारी में उसने गुलाब का फूल देखा। सूरज की पहली किरण को अपने सीने से लगाये वह खिल-खिलाकर हंस रहा था।

o o o

"यह है वह दिन।" दीपक ने पूरब से फूटती हुई सूर्य की किरणों को देखकर कहा—"तो यह है वह दिन…जिसने जीवन के धारों का रुख मोड़ दिया है…तो हैं रोशनी की वह नन्हीं-नन्हीं किरणें जिन्होंने प्रतिज्ञा की है आशाओं को निराशाओं में बदलने की…तो यह है मेरी असफल मुहब्बत की सुन्दर अर्थी।"

गाउन की जेबों में हाथ डालकर वह अपने फ्लैट की छत पर टहलने लगा।

शूर्य की किरणों का कारवां आगे बढ़ता जा रहा था। फिर सूर्य नजर आया। किसी अर्थी की भांति—किरणों के कंधों पर सवार सैकड़ों-हज़ारों पक्षी मानो शोक-धुन बजा रहे थे।

वह टहलता रहा—सोचता रहा—"इन दुःखों का कभी अन्त भी होगा…क्या वह शीला को भूल सकेगा।"

हरीश ने ठीक ही तो कहा था। अब वह पराई हो चुकी है। अब उसके बारे में सोचना भी पाप है।

क्या यही अंजाम होना था ? सब कुछ हार जाए वह और आह भी न करे।

उसके नेत्र सजल हो उठे। उसे वह विस्तृत सन्देश याद आया जिसे बधाई सन्देश कहा जा सकता था—शादी के कार्ड के उत्तर में उसने शीला को लिखा था—

'आपका भेजा हुआ कार्ड मिला…किस दिल से शुक्रिया अदा करूं।"

जब आप तक मेरा यह पत्र पहुंचेगा तो आप दुल्हन की तरह सजी-संवरी होंगी, सुर्ख जोड़ा, संवरे हुए केश, मांग में मुस्कराते सितारे और मुखड़े पर लाज की लालिमा। कितना अरमान था आपको इस दिन का !

और संसार में हम जैसे अभागे भी हैं कि इस रूप में आपको नजर भरकर देख भी नहीं सकते।

सोचा इस खुशी के अवसर पर आपको कोई उपहार दूं —पहले ख्याल आया कि ताजमहल उचित रहेगा—ताजमहल का एक छोटा-सा मॉडल—प्रेम की महानता का जीवित प्रमाण परन्तु फिर सोचा कि इस प्रकार तो अपने प्यार का अपमान होगा।

उस प्यार का अपमान होगा जो मैंने किया है। एक साधारण मनुष्य जिसका नाम दीपक है की मुहब्बत—एक सम्राट की मुहब्बत से बराबरी कैसे कर सकती है। सुनते हैं जब मजादूरों ने ताजमहल मुकम्मल कर लिया था तो सम्राट ने उनके हाथ कटवा डाले थे। कितना बड़ा अन्याय था यह, उस मुहब्बत में कितना स्वार्थ था—शायद—शायद इस ज्यादती पर मुमताज की आत्मा तड़प उठी होगी—सम्राट ने उसके प्यार का अपमान जो किया था—मुहब्बत के उस जीते-जागते प्रमाण जिसके अस्तित्व पर कटे हुए हाथों के रक्त की छाप है को उपहार स्वरूप आपको देते समय प्यार का अपमान ही तो होगा। इसलिए दिल नहीं माना और मैंने ताजमहल का मॉडल तोड़ दिया। वह—सुन्दर वस्तुएं जिनका आधार अत्याचार पर हो बननी नहीं चाहिए और अगर यदि बन जाएं तो तोड़ देनी चाहिएं। ताजमहल को तोड़ देने के बाद मैं सोचने लगा कि आपको क्या दूं ?

मन करता था कोई ऐसी वस्तु हो जिस पर कोई उंगली न उठा सके। जिस पर स्वार्थ की छाप न लगी हो। सोचता रहा सोचता रहा कि इतने में मेरी आंख में एक आंसू टपक पड़ा यह जो लिखावट धुंधला गई है यहां मेरा आंसू है। एक तुच्छ उपहार—टैगोर ने कहा था ताज मुहब्बत की आंख से

टपका हुआ वह श्रांसू है जो समय के गाल पर थम गया है। इसी तरह मैं कहना चाहता हूं कि यह जो बधाई सन्देश है, उसके ऊपर ठहरा हुश्रा श्रांसू जो सूख जाएगा—मेरा उपहार है तुम्हारी शादी पर।

तुमने जो क्षमा करने के लिए लिखा है उसके उत्तर में यदि कहूं—'की मेरे कत्ल के बाद उसने जफा से तोवा'—क्या यह गलत होगा ?

अच्छा जाइए आप भी क्या याद करेंगी कि किसी दिल वाले से पाला पड़ा था—हमने श्रापको क्षमा किया—हमारा श्रापका हिसाब साफ।

याद है श्रापको मैंने कितना बड़ा वचन दिया था—निभा रहा हूं उसे और मरते दम तक निभाऊंगा—वदले में एक वचन क्या श्राप मुझे दे सकेंगी ?

मुझे यकीन है कि श्राप वचन देंगी।

वचन दीजिए कि जब श्राप इतनी सुन्दर न रहें—जब श्रापके लम्बे-लम्बे केश सफेद पड़ जाएं, जब श्रापका सुन्दर मुखड़ा झुर्रियों से भर जाए, जब श्राप दर्पण देखकर डरने लगें, एक लाठी हो श्रापके हाथ में जिसका सहारा लिए बिना श्राप चल भी न सकें—मुहल्ले के बच्चे आपको घेर लिया करें श्रौर श्रापसे परियों की कहातियां सुनने की फरमाइश किया करें—तब—हां—तब किसी भी दिन—किसी भी क्षण जबकि आपके आस-पास कोई न हो श्राप यादों की उस नगरी में एक बार—केवल एक बार श्रवश्य आएंगी जहां आपको एक दीवाना मिलेगा—डा० दीपक है उसका नाम—श्राप उससे मिलकर एक बार—सिर्फ एक बार इतना तो कह देंगी ना—कि इस जनम में मिलना न हुश्रा तो क्या है। श्रगले जनम में हम दोनों श्रवश्य मिलेंगे।

लीजिए—मैं भी कहां की बातें ले बैठा—खुशी का श्रवसर उस पर ऐसी बातें—यह श्रन्याय नहीं श्रापके साथ तो श्रौर क्या है।

श्रब श्राज्ञा चाहता हूं—इन कामनाश्रों के साथ कि श्राप

हमेशा खुश रहें—भगवान करे कि वह तकलीफें, वह दु:ख, वह निराशा जो यदि आपकी ताक में बैठी हैं, तो रास्ता भूल जाएं और उन रास्तों पर चली आएं जहां से दीपक की गुजर है। राम करे आपके मार्ग के सारे कांटे मेरे भाग्य में आ जाएं, आप सदा खुश रहें—हंसती, खेलती, गुनगुनाती, उछलती नदी की तरह।

तुम सलामत रहो हजार बरस।
हर बरस के दिन हों पचास हजार॥

दीपक—'

दर्द से भरी एक सांस लेकर उसने सोचा—ऐसे हैं हमारे सपने …ऐसी हैं हमारी आशाएं और जीवन है, पीड़ा से परिपूर्ण…उस पर सितम यह कि जीना है कर्त्तव्य पालन करना है…जीवित शव को उठाए इन वीरानों से गुजरते रहना है, जहां फूल खिलने से पहले बिखर जाते हैं, जहां मुस्कराहटें चटख जाती हैं और बरबादियां कहती हैं…आइये आपकी जरूरत है।

० ० ०

"रहने दो इसे।" शेखर गुर्राया—"मैं खुद बना लूंगा। मुझे चाय बनानी आती है।"

"अगर मैं बना दूं तो…तो?"

"विषैली हो जाएगी यह।" शेखर गुर्राया—"मर सकता हूं मैं इसे पीकर।"

"कौन ऐसी अभागिनी होगी जो अपने सुहाग को…।"

"मुझे ऊंचे-ऊंचे डायलाग सुनने की आदत नहीं है।"

"श…श…शेखर!"

शेखर ने हल्का-सा कहकहा लगाया फिर बोला—"तुम्हारी सेवा…तुम्हारी पूजा…और तुम्हारा यह नाटक मेरे इरादों को बदल नहीं सकता। वह नफरत जो मेरे हृदय में तुम्हारे लिए है—इन आंसुओं और इस नाटक की पहुंच से बहुत दूर है।"

"क्या मेरी मुहब्बत एक नाटक है।"

"हां।"

"इतना बड़ा आरोप तो न लगाओ।"

"संसार में सब कुछ नाटक है। वह भी एक नाटक था जो आनन्द ने मेरी बहन के साथ रचाया था।"

"उसके लिए तुम मुझे जो चाहो सजा दे लो मगर…।"

"सजा देने के लिए मुझे तुम्हारी इजाजत की जरूरत नहीं।"

शीला की आंखों से आंसू बहने लगे।

"और तुम्हारे यह आंसू उस नफरत को बहा कर नहीं ले जा सकते जिसकी जड़ें मेरे दिल में बहुत दूर-दूर तक फैली हुई हैं और …और जो काफी मजबूत हैं।"

शीला ने साड़ी के पल्लू से आंसू पोंछ कर कहा—"दिल खोल कर जुल्म कर लो शेखर…वचन देती हूं कि अब इन आंखों से आंसू नहीं बहेंगे और…और तुम्हारे हर जुल्म का जवाब मैं खामोशी से दूंगी। यह होंठ कभी नहीं खुलेंगे किसी को यह बताने के लिए कि एक रात की दुल्हन को तुमने कौन-कौन से उपहार दिए हैं।"

शेखर कहकहा लगा कर रह गया।

० ० ०

वह कमरे में दाखिल हुआ तो हरीश ने गौर से ऊपर से लेकर नीचे तय देखा। काफी देर तक देखता रहा। फिर पूछने लगा—"तुम्हारा नाम ?"

"जग्गू।" नवागन्तुक ने कहा। हुलिए से वह गुंडा नजर आता था—चेहरे पर घाव का एक लम्बा निशान उसके अपराधी जीवन की कथा सुना रहा था।

हरीश ने अपने हाथ में थामा हुआ कार्ड देखा फिर बोला—"राजेन्द्र ने भेजा है तुम्हें ?"

"जी साब।"

"हूं!" हरीश खड़ा हो गया—"दरवाजा अन्दर से बन्द कर दो।"

जग्गू पलटा। फिर दरवाजा बन्द करके हरीश की ओर देखने लगा।

"मेरे निकट आओ।"

वह हरीश के निकट आ गया।

"और निकट।"

वह और अधिक निकट आ गया।

हरीश ध्यानपूर्वक उसे देखता रहा। फिर आंखें सिकोड़कर बड़बड़ाया—"मेरे ख्याल से तुम वह काम कर सकोगे।"

"काम बताइए साब?"

"बताने से पहले कुछ पूछूंगा?"

"जरूर पूछिए।"

"वह एक खतरनाक काम है।"

"जी!"

"इससे पहले कभी खतरनाक काम किए हैं।"

"सैकड़ों।"

"किस हद तक खतरनाक?"

"हत्या तक की है।"

"हूं, परन्तु यह हत्या का मामला नहीं है।"

"इसके बावजूद आप उसे खतरनाक कह रहे हैं!"

"और बताने से पहले मैं राजदारी का वायदा चाहूंगा।"

"राजेन्द्र साहब मुझे भली प्रकार जानते हैं साब···जग्गू नाम है एक चट्टान का।"

"यदि पकड़े गये तो···?"

"जान चली जाएगी···होंठ नहीं खुलेंगे।"

"प्रमाण?"

"राजेन्द्र साहब दे सकते हैं।"

"हूं, एक एक्सीडेंन्ट करना है।"

"यह तो मामूली काम है।"

"तुम्हारे पास मोटर साईकिल है ना!"

"जी हां।"

"जिसके साथ ऐक्सीडेन्ट करना है, वह स्कूटर पर यात्रा करता है—टू व्हीलर पर।"

"हूं।"

"ऐसा ही होगा साब।"

"एक्सीडेन्ट इस तरह करना है कि वह खत्म न हो। इसे हत्या केस नहीं बनना चाहिए।"

"ऐसा ही होगा साब।"

"उसे घायल कर दो। चाहे साधारण रूप से। बस उसे हास्पि-टल तक आना चाहिए। बाकी मैं सब ठीक कर लूंगा।"

"हो जायगा साब मगर···।"

"बोलो।"

"मुआवजा ?"

"मुंह मांगे दाम अदा किए जाएंगे। शर्त सिर्फ यह है कि राज-राज रहे···।"

"ऐसा ही होगा।"

"तो देखो यह है उस व्यक्ति का फोटो।" हरीश ने जेब से एक फोटो निकाल कर कहा।

जग्गू ने फोटो ले लिया और उसे देखने लगा।

"शेखर नाम है इसका।"

"हूं, बहुत सुन्दर है।"

"हां।" हरीश दांत पीसकर गुर्राया—"बहुत गर्व है इसे अपनी सुन्दरता पर···बड़ा घमंड है इसे अपने आप पर।"

जग्गू सर खुजाता हुआ बोला—"यह कोई प्रेम का चक्कर मालूम होता है साब···।"

"जग्गू···।" हरीश गुर्राया।

"ज···जी साब।"

"आम खाने वाले को वृक्षों की गिनती का काम नहीं करना चाहिये।"

"ज···जी।"

हरीश पतलून की जेबों में हाथ डाले टहलता रहा। फिर बोला—"ऐक्सीडेन्ट के तुरन्त बाद तुम्हें वहां से खिसक जाना है···तुम्हारी मोटर साईकल पर जाली नम्बर की प्लेट होनी चाहिए।"

"ऐसा ही होगा साब।"

"लुंगिया हास्पिटल एण्ड नर्सिंग होम···देखा है ?"

"हां साब···चेरी स्ट्रीट के नुक्कड़ पर।"

"हूं, ऐक्सीडेन्ट उसके आस-पास होना चाहिए, ताकि उसे घायल करके उसी नर्सिग होम में लाया जा सके।"

"ल'''लेकिन साहब।" जग्गू के स्वर में हिचकिचाहट थी।

"हां-हां कहो।"

"वह नर्सिग होम ठीक नहीं रहेगा।"

"क्या ?"

"वहां का मेडिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट बहुत सख्त आदमी है। डा० दीपक है शायद उसका नाम। अभी पिछले दिनों का एक केस है। पुलिस भी हमारे साथ मिल गई थी और मामले को दबाना चाहती थी मगर उसने ऐसी सख्त रिपोर्ट दी कि'''।"

"तुम इसकी चिन्ता मत करो।"

"म'''मगर।"

"मैं कह रहा हूं ना। वह सब कुछ मुझ पर छोड़ दो।"

जग्गू होंठ सिकोड़ कर रह गया। फिर उसने कहा—"ठीक है अब तो फिर कल ही लीजिए। लुंगिया हास्पिटल के लिए एक नया केस। कल मैं छाया की भांति उसका पीछा करूंगा और जैसे ही वह निशाने पर आएगा'''।"

हरीश के अधरों पर एक ऐसी मुस्कान फैल गई जिसके चारों ओर शान्ति की घेराबन्दी थी।

० ० ०

प्राईवेट वार्ड से नए पेशेन्ट के कराहने की आवाजों के साथ-साथ एक स्त्री के सिसकने की आवाज़ें भी आ रही थीं। ज्यों-ज्यों यह आवज़ें बढ़ती जा रही थीं गैलरी में दीवार से टेक लगाए खड़े हुए हरीश के होंठों पर फैली हुई मुस्कान गहरी होती जा रही थी।

फिर जब वार्ड में से नजदीक होते हुए कदमों की आवाज़ें सुनाई देने लगीं तो वह जल्दी से सीधा खड़ा हो गया—उसके होंठ भिच गये और वह दरवाज़े की तरफ देखने लगा।

दरवाज़ा खोलकर डा० दीपक बाहर निकला—उसके चेहरे पर थकान के चिह्न थे, ललाट पर बाल बिखरे हुए थे। हरीश को देखकर वह ठिठक पड़ा।

"तुम ?"

"हां !" हरीश ने कहा—"अब कैसी हालत है शेखर की ?"

"ठीक है।"

"मगर वह तो कराह रहा है।"

"एक-दो दिन तकलीफ रहेगी ही··· तुम गए नहीं।"

"हां···रुक गया जाते-जाते···।"

"क्यों ?"

"तुम परेशान नज़र आ रहे थे ना।"

"हूं···परेशानी की बात ही थी। सर के घाव से बराबर खून वह रहा था।"

"अब।"

"वह बात नहीं···खून बन्द हो गया है।"

"कितने टांके आए।"

"छः।"

"शीला का क्या हाल है !"

"बहुत परेशान है वह···" दीपक ने कहा—"हालांकि अब परेशानी की कोई बात नहीं।"

"तुमने समझाया नहीं ?"

"समझाया था···मगर वह मानती ही नहीं।"

"हूं।" हरीश बड़बड़ाया। फिर उसके साथ-साथ चलता हुआ बोला—"सोचता हूं कुदरत ने तुम्हें कितना अच्छा अवसर दिया है।"

"क्या मतलब ?" दीपक चलते-चलते ठिठक पड़ा।

"मतलब यह है कि···।" हरीश मुस्कराया—"वैसे तो शायद जीवन-भर अवसर नहीं मिलता इस प्रकार मिलने का।"

"कितने शर्म की बात है···वह परेशान है और तुम इस प्रकार की बातें सोच रहे हो।"

"अब यदि वह अकारण परेशान होती रहे तो इसका इलाज तो किसी के पास है नहीं।"

"अकारण···।" दीपक ने उसकी ओर देखा।

"तुम कह रहे हो ना कि अब परेशानी की कोई बात नहीं।"

"मगर इसका मतलब यह तो नहीं कि···?"

"दीपक पागल मत बनो···कुदरत ने तुम्हें एक अच्छा अवसर दिया है। उसे अपने कमरे में बुला लो···और कुछ नहीं तो चाय पिलाने के बहाने से ही सही।"

"हरीश···तुम होश में तो हो।"

"इसमें बेहोशी की क्या बात है।"

"शर्म करो—तुम एक डाक्टर हो।"

"शर्म···किस बात की शर्म···कैसी शर्म?"

"कम-से-कम एक डाक्टर को इतना मूर्ख भी नहीं होना चाहिए जितने तुम हो।"

"तुम्हें मैं बुद्धिमान कब नज़र आया हूं।"

"तुमने बुद्धिमत्ता की बात की कब है?"

"तो मैं अब तक बेवकूफियां ही करता रहा हूं।"

"बिलकुल···सबसे बड़ी बेवकूफी तो यह है कि तुमने प्रेम किया···बुरा किया, गम्भीरतापूर्वक किया···यह उससे भी बुरा किया···और अब शराफ़त की टें-टें हांक रहे हो यह सबसे बुरा है···तुम आखिर किस चक्कर में हो···जब तुमने तय कर लिया है कि मुहब्बत करोगे तो केवल शीला से···तो अब इतना अच्छा अवसर हाथ लगा है तो तुम उसे क्यों गंवा रहे हो···!"

"तुम्हारे नज़दीक मुहब्बत का मतलब केवल यह है कि दो शरीरों का मिलाप हो जाए।"

"जी नहीं।" हरीश ने दांत पीसे—"यह है कि मनुष्य गेरुवे वस्त्र पहन ले और लैला-लैला चिल्लाता हुआ जंगलों की ओर भाग जाए—अबे गधे होश में आ जा तुझे मेरे अठहत्तरवें इश्क का वास्ता···।"

"हरीश···मेरे मित्र···इन तिलों में तेल नहीं···।"

"और यार का नाम भी हरीश नहीं···अगर तुम्हारे सिद्धान्तों की इमारत चकनाचूर न कर डाली···मैदान में तो अब आया हूं और तुम्हारा और शीला का मिलन कराकर ही छोड़ूंगा।"

"असम्भव।"

"देखते रहो···चाल चल चुका हूं।"

"चाल···क्या मतलब है तुम्हारा!"

हरीश एकदम संभल गया और बोला—"मैंने शीला से बात की थी।"

"कब...!"

"आज ही।"

"क्यों?"

"थोड़ी-सी लागत लगाई है...कोशिश की है कि उसे तुम्हारी ओर झुका सकूं।"

"यह असम्भव है...।" दीपक मुस्कराया—"तुम भरपूर कोशिश कर लो। यदि तुम उसे झुका सके तो यकीन मानो मैं अपनी हार स्वीकार कर लूंगा। स्त्री जाति और धर्म पर से मेरा विश्वास उठ जाएगा...फिर...फिर मुझमें एक नया हरीश जन्म लेगा।"

"स्त्री जाति और धर्म...।" हरीश ने होंठ सिकोड़े—"हूं...यह सब चीजें...यह सारे सिद्धांत और यह सारे आदर्श उन जालिमों ने तैयार किये हैं जिन्हें आज से हजारों वर्ष पूर्व जुल्म करने का चस्का था। जो अपने अत्याचारों को शराफत का लिबास पहनाने के इच्छुक थे। नवाब, जागीरदार, उच्चाधिकार के मालिक और पूंजीपति यह चाहते थे कि गरीब और पिछड़े हुए लोगों को उनकी वंचिताओं के बारे में न सोचने देने के लिए एक ऐसा नशा ईजाद कर दिया जाये जो सर चढ़कर बोले अतः उन्होंने धर्म नाम की अफीम ईजाद कर डाली...यह नशा इतना सफल हुआ और इतना सर चढ़कर बोला...कि आज भी लगातार फाके करने वाला मनुष्य भूखे पेट पर हाथ फेरकर कहा करता है—'भगवान की इसमें भी कोई बेहतरी है।' भूखी, नंगी जनता आज भी घिसे-पिटे सिद्धांतों से लिपट-लिपटकर कहती है—'यह हमारे पिछले जन्म के कुकर्मों का फल है।' फिर वह अपने आपको रिश्वत देते हैं। यह कहकर—'चलो...इस जन्म में दुःख भोगे हैं तो भगवान अगले जन्म में सुख ही सुख देगा।' और जालिम अत्याचारी मनुष्य तिजोरियों पर कुंडली मारे बैठा कहकहे लगाता रहता है। उसके पास इतनी दौलत होती है कि वह गिन नहीं पाता। इतने कहकहे होते हैं जिनकी गिनती असम्भव है। इतनी खुशियां होती हैं कि उनकी भीड़ में

उसकी ज़िन्दगी गाती-गुनगुनाती बहती चली जाती है। वह परिश्रमी जनता का खून चूस-चूस कर ऐश करता है। अपनी दौलत में से एक मुट्ठी भरकर किसी गरीब को दे देता है तो उसे दानी कहा जाने लगता है। उनकी शान में कविताएं लिखी जाती हैं। वह छींकता है तो उसकी छींक भी कलात्मक हुआ करती है। रात्रि का अंधकार हो या दिन का प्रकाश वह धड़ाधड़ पाप करता रहता है। फिर···यदि मुसलमान है तो हज कर आता है और हाजी कहलाता है। हिन्दू होता है तो जलवायु परिवर्तन के लिए तीर्थ यात्रा कर आता है और अपने सारे पाप गंगा मैया में धोकर पूर्णतया पवित्र होने के बाद अपनी दुनिया में वापस चला आता है। ऐसे लोगों को सभी सभाओं में ऊंचे स्थान पर बिठाया जाता है और जब ऐसे लोग भाषरण देते हैं तो धार्मिक अफीम के नशे में मस्त भूखे मनुष्य इतने ज़ोर-ज़ोर से तालियां बजाते हैं कि उनके हाथ दर्द करने लगते हैं।"

"पूंजीपतियों के जीवन के जो दुःख हैं सम्भवतः तुम उनसे अपरिचित हो।"

"वेरी गुड···तो क्या उनके जीवन में दुःख भी होते हैं।"

"हां, ऐसे दुःख जो तुम जैसे सावन के अंधों को नजर नहीं आते। क्या तुम एक भी पूंजीपति दिखा सकते हो जो रात को बिस्तर पर लेटते ही गहरी नींद सो जाता हो···मैं तुम्हें केवल एक उदाहरण देता हूं···एक बार मेरे पास एक ऐसा करोड़पति आया था जिसने निरीक्षण-कक्ष में दाखिल होते ही हाथ जोड़कर मुझसे विनती की थी···डाक्टर···भगवान के लिए मुझे नींद दे दो। मानसिक शान्ति···और बदले में मेरी सारी दौलत ले लो। केवल एक नींद···एक भरपूर नींद। यह थी उसकी हालत, नींद लाने वाली गोलियां भी उसके लिए बेकार हो चुकी थीं। रातों को वह पागलों की तरह चिल्लाता था और दीवारों से सर फोड़ता था। यह नींद जो प्रत्येक परिश्रमी मनुष्य को मिल जाती है। उसकी कीमत कोई उस करोड़पति से पूछे।"

"पागल था वह···यदि मैं उसके स्थान पर होता तो सोलह घंटे की बजाये चौबीसों घंटे ऐयाशी करता···अच्छा अब जाओ।

अपने कमरे में जाकर बैठो। मुझे मालूम है कि मैं बहस में तुमसे कभी नहीं जीत सकता। जाओ मैं तुम्हारे लिए चाय भेज रहा हूं।"

दीपक मुस्कराता हुआ अपने कमरे की ओर चल पड़ा।

° ° °

"मारग्रेट।" हरीश ने धीरे से आवाज़ दी।

सफेद यूनीफार्म पहने हुए ड्यूटी नर्स ठिठक पड़ी और मुड़कर आवाज़ देने वाले को देखने लगी। फिर हरीश को देखकर उसके अधरों पर मुस्कराहट फैल गई और वह बोली—"यस डाक्टर।"

हरीश उसके करीब पहुंच कर बोला—"हाऊ आर यू डार्लिंग?"

"क्वाइट वेल।" मारग्रेट ने आंख दबाई।

"ओह!" हरीश ने उसके बाज़ू में उंगली चुभाकर कहा—"नाटी गर्ल।"

मारग्रेट मुस्कराने लगी। उसके चेहरे पर आत्मसमर्पण के भाव फैल गए।

"कहां जा रही हो।"

"पेशेन्ट के वास्ते स्टोर से इंजेक्शन लेने को।"

"पेशेन्ट···कौन-सा पेशेन्ट।"

"वही···एम० ए० मेडिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट का स्पेशल पेशेन्ट मि० शेखर।"

हरीश की आंखें चमकने लगीं। वह बोला—"मेरे साथ आओ।"

"कहां?"

"मेरे कमरे में।"

"क्यों?"

"मारग्रेट···तुम जानती हो। जवाब देने की मेरी आदत नहीं।"

"वह डाक्टर···कोई देख लेगा।"

"कोई नहीं देखेगा···कम आन।" यह कहकर हरीश चल पड़ा। अपने कमरे में पहुंचकर उसने अन्दर से दरवाज़ा बन्द किया

और मारग्रेट पर इस तरह झपटा जैसे चूहे पर बिल्ली झपटती है। मारग्रेट को खूब कसकर पकड़ लेने के बाद वह उसके होठों के करीब अपने होंठ ले जाकर बोला—"तुम्हें याद है ना कि एक वार मैंने तुम पर उपकार किया था। तुम्हारी जान बचाई थी। वरना एक गर्भपात के केस के चक्कर में···।"

"यस सर।" मारग्रेट ने घबराकर कहा।

"आज उस उपकार का बदला चुकाने का अवसर आ गया है। उस पेशेन्ट का मिसेज़ है ना···!"

"हां।"

"वह अत्यन्त सुन्दर है।"

मारग्रेट की आंखें फैलती गईं।

"मैं उसे स्थायी रूप से अपने चक्कर में फांसना चाहता हूं।"

"म···मगर।"

"खामोश।" हरीश गुर्राया। उसे छोड़कर वह अपनी मेज की तरफ गया, और उसने दवा की एक शीशी मेज की दराज से निकाली। फिर उसे सीरेंज में भरने लगा।

मारग्रेट लपककर मेज के करीब आई और फटी-फटी आंखों से उस दवा को देखकर धीरे से चीखी—"डाक्टर···डाक्टर!"

हरीश ने उसकी चीख को नजर अंदाज करते हुए सुई ऊपर ले जाकर नीचे से थोड़ा-सा पुश किया। सुई की नोंक से दवा के कतरे उबलने लगे। फिर सीरेंज मारग्रेट की ओर बढ़ाकर बोला—उस पेशेन्ट के शरीर में यह इंजेक्शन लगेगा।"

"यह इंजेक्शन!" मारग्रेट ने आश्चर्य से कहा—"परन्तु इससे तो वह अपनी मरदाना ताकत खो देगा।"

"ऐसा होना ही चाहिए।" हरीश धीरे से गुर्राया—"और यदि ऐसा न हुआ तो मैं तुम्हें बताना चाहता हूं मारग्रेट कि कानून के हाथ बहुत लम्बे होते हैं। पुराने केसेज़ दुबारा भी खुल जाया करते हैं। मुझे यकीन है कि तुम उस सुन्दर स्त्री की लाश अब तक नहीं भूली होगी जिसका एवारशन केस असफल एवारशन केस ···तुमने अंजाम दिया था।"

मारग्रेट थर-थर कांप रही थी। उसने जल्दी से सीरेंज ले ली

—फिर वह तेजी से मुड़ी और दरवाजा खोलकर बाहर चली गई।

हरीश ने हल्का-सा कहकहा लगाया। फिर मेज की दराज से दीपक की तस्वीर निकालकर बोला—"मेरे बचपन के यार··· तेरी खुशियों के लिये हरीश हत्या करने से भी नहीं चूकेगा··· यह तो साधारण-सा काम है। एक मर्द को नामर्द बना देना।"

० ० ०

"याद किया था आपने मुझे ?" शीला ने कमरे में दाखिल होकर दीपक से पूछा।

"म···मैंने !" दीपक ने चकित होकर पूछा।

"हां, डा० हरीश मेरे पास आए थे···कह रहे थे कि आपने मुझे बुलाया है।'

"यह···यह बात नहीं। दरअसल मैंने उससे कहा था कि दोप-हर से अब तक आपने एक कप चाय भी नहीं पी है।" दीपक ने जल्दी से बात बनाई—"तो उसने मेरे पास चाय भेज दी और उधर आपको···बैठिये ना।"

शीला सामने वाली कुर्सी पर बैठ गई।

"अगर कोई एतराज न हो तो चाय आप बना लीजिए।"

"हां, जरूर, आपके लिए मैं बना देती हूं। मगर मैं···।"

"आप नहीं पियेंगी···मगर क्यों ?"

शीला सर झुकाकर बोली—"वह इस प्रकार हास्पिटल के वार्ड में पड़े हैं और मैं···।"

"क्या बेवकूफों की-सी बातें करती हैं आप···क्या आपको मुझ पर विश्वास नहीं है। यकीन मानिए अब उन्हें कोई खतरा नहीं है और मेरे ख्याल से कल हम उन्हें यहां से डिस्चार्ज कर देंगे।"

"फिर भी···।"

"चाय पी लेने में क्या हर्ज है।'

शीला खामोशी से चाय बनाने लगी।

"भगवान का लाख-लाख शुक्र है कि उन्हें ज्यादा चोट नहीं आई।" दीपक ने कहा—"वरना···जब मैंने उन्हें खून में डूबते देखा था तो एक डाक्टर होने के बावजूद मेरे हाथ-पांव फूल गये थे

आप उन्हें स्कूटर चलाने से मना क्यों नहीं करतीं।"

"अब मैं इस सम्बन्ध में सावधानी बरतूंगी—चाय लीजिए।"

"और आप…।"

"ज़िद न कीजिए…जिस काम को मन न चाहे…वह काम न किया जाए तो अच्छा है।"

"ठीक है मैं ज़िद न करूंगा।"

फिर वहां खामोशी फैल गई। कुछ क्षणों के बाद दीपक ने पूछा—"कैसी हैं आप…मेरा मतलब है नया जीवन।"

"सब कुछ ठीक है।"

"कहना तो नहीं चाहता…लेकिन जब बात मन में आ गई है तो कहे बिना भी नहीं रहा जाता…म…मैं आप में वह चंचलता नहीं देख रहा जो आपके लिए विशेष थी। उसके स्थान पर गम्भीरता-सी नज़र आती है आपके चेहरे पर…।"

"उनका एक्सीडेंट हो गया है…यह शायद उसी का असर है…जिसके साथ एक्सीडेंट हुआ था वह…।"

"वह फरार होने में सफल हो गया पुलिस उसकी खोज कर रही है।"

"गलती उसी की थी ना।"

"हां…लोगों का विचार है कि वह नशे में धुत् था।"

शीला—हूं करके रह गई उसकी निगाहें मेज की टाप पर जमी थीं। कुछ क्षणों बाद उसने निगाहें नीची किये-किये पूछा—"आप शादी क्यों नहीं कर लेते।"

"शादी!" दीपक उछल पड़ा।

"हां, कहिए तो आपके लिए कोई अच्छी-सी लड़की तलाश करूं।"

दीपक सिगरेट सुलगाकर बोला—"मैंने तलाश कर ली है।"

"सच…?"

"हां…अत्यन्त सुन्दर है वह…मैं उसके लिए बहुत बेचैन रहा करता हूं…म…मगर बेवफा-सी है बहुत प्रतीक्षा करवाई है उसने।"

"मुझे उसका नाम बताइए…मैं उससे मिलकर उसे समझा-

ऊंगी।"

"आप···? नहीं, मैं नहीं चाहता कि आप उससे मिलें···भगवान करे आप कभी उससे न मिलें।"

"क्यों ?" शीला ने आश्चर्य से पूछा।

"बस···मन नहीं चाहता मेरा।"

"इतना क्रोध है आपको मुझ पर।"

"नहीं, यह बात तो नहीं।"

"फिर आप उसका नाम क्यों नहीं बताते ?"

"क्या करेंगी आप पूछकर···क्या लाभ होगा आपको ?"

"मन को एक प्रकार से शांति मिल जाएगी—कभी-कभी आप के लिये सोचती हूं तो चिन्तित-सी हो जाती हूं।"

"सोचा ना कीजिये ना···।"

"जब आप शादी कर लेंगे तो यह सोच अपने आप खत्म हो जाएगी, नाम नहीं बताया आपने उसका ?"

"सुनना चाहती हैं आप तो सुनिए···।" दीपक आगे झुका फिर धीमे स्वर में बोला—"मौत है उसका नाम।"

"द···द···दी···पक बाबू !"

"आपने अपनी पसन्द की शादी की···क्या यही अधिकार आप मुझे नहीं देंगी।"

शीला की आंखों में आंसू झिलमिलाने लगे।

"शाम को आपके ससुर आए थे ना !" दीपक ने जल्दी से दूसरी बात की—"उनका व्यवहार आपके साथ कुछ अच्छा नहीं था—मैंने सुना वह कह रहे थे कि आप उस घर के लिए मनहूस सिद्ध हुई हैं उन्होंने आपका अपमान भी किया था और···।"

"दीपक बाबू !" शीला का स्वर पत्थर की भांति कठोर था —"वह मेरा निजी मामला है और आपको मेरे निजी मामले में बोलने का कोई अधिकार नहीं।"

"म···मैं माफी चाहता हूं निःसंदेह वह आपका निजी मामला था परन्तु जब एक बार शेखर साहब ने आंखें खोलीं···और मुझे अपने करीब पाया तो उनके चेहरे पर कुछ अच्छे भाव नहीं थे। उन्होंने मेरी उपस्थिति का ख्याल भी नहीं किया तथा घायलावस्था

में होने के बावजूद आपको बुरी तरह झिड़क दिया···मैं यह नहीं सोचा सकता कि कहीं मैं ही तो वह अड़चन नहीं हूं जो आपकी घरेलू खुशियों के रास्ते में बाधा बन रहा हूं। इसलिए मैंने आपके निजी मामले को छेड़ा है···अगर···अगर सचमुच ऐसा है तो मैं यह नगर छोड़कर चला जाऊंगा।''

''ऐसी कोई बात नहीं है।'' शीला ने कहा—''मैं तो केवल इतना चाहती हूं कि आप शादी कर लें।''

''मैं शादी अवश्य करूंगा परन्तु केवल मौत से। आपको याद होगा एक बार मैंने कहा था—दीपक का काम है रोशनी देना—रोशनी देते रहना—स्वयं उसके दामन में अंधेरे हुआ करते हैं और अंधेरों को ही मौत कहा जाता है।''

शीला ने थके-थके से अन्दाज में एक गहरी सांस ली।

०　　　　　०　　　　　०

''न जाने पिछले जन्मों में मैंने कौन-से पाप किये थे जो इस जन्म में यह कलंकिनी मेरे पल्ले बंध गई।'' शेखर गुर्राया—''मुझे छोड़ दो पिताजी ताकि मैं इसका गला घोंटकर किस्सा ही खत्म कर दूं।''

''छोड़ो शेखर···बहुत हो चुका···तुमने इसे बहुत मार लिया।'' शान्तिप्रसाद ने कहा—''आज के लिए इतना ही बहुत है। खत्म कर दोगे इसे तो यह डायन हमें भी ले डूबेगी।''

शीला खून में नहाई फर्श पर पड़ी थी। आज शेखर ने उसे दिल खोलकर मारा था। क्योंकि आज शेखर को एहसास हो गया था कि अब वह एक ऐसा सावन बन चुका है जो सूखा है। अब वह एक ऐसा पुष्प है जिसमें सुगन्ध नहीं। अब वह एक ऐसा पुरुष है जिसमें पुरुषत्व की कोई बात नहीं।

इस रहस्योद्घाटन पर वह गुस्से से पागल हो उठा था और यही दशा लाला शान्तिप्रसाद की थी जबकि उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं था कि उनका बेटा एक अमूल्य शक्ति से वंचित हो चुका है। कुछ क्षणों तक सन्नाटा रहा, फिर शान्तिप्रसाद ने सर पकड़ कर कहा—''फूट गया मेरा भाग्य तो।''

और शेखर बफर कर बोला—''यह षड्यन्त्र है पिताजी, एक

गहरा षड्यन्त्र और मैं उस एक्सीडेण्ट को इसी षड्यन्त्र का एक भाग समझता हूं। यह षड्यन्त्र इसने अपने यार के पास बैठकर रचा था। आप संयोग तो देखिए मेरा एक्सीडेन्ट भी हुआ तो कहां …ठीक लुंगिया हास्पिटल के करीब।"

"हां, वेटे मुझे क्या मालूम था कि मैं एक नागिन को अपनी बहू बनाकर ला रहा हूं।"

"नागिन…हां एक विषैली नागिन।" शेखर गुर्राया तथा एक बार फिर शीला पर टूट पड़ा। उसने पागलों की भांति उस पर ठोकरें बरसानी शुरू कर दीं।

o o o

"जब तक मुझसे सहन हो सका, मैं सहन करता रहा लाला शान्तिप्रसाद जी, मगर अब पानी सर से ऊंचा हो चुका है। अब मुझसे और अधिक सहा नहीं जाता, मैं अपनी लड़की को लेने आया हूं।"

शान्तिप्रसाद ने हल्का-सा कहकहा लगाया फिर बोले—"बस अभी से रो पड़े, फटने लगी छाती। च…च…तुम तो कमजोर सिद्ध हुए केदारनाथ।"

"क…क्या मतलब ?"

"इस बाप के दिल से पूछो।" शान्तिप्रसाद ने उंगली से अपने सीने की तरफ इशारा करके कहा—"अर्थी उठाई थी इस अभागे ने अपनी जवान लड़की की।"

"तत…तो…तो आप मेरी मासूम बच्ची से बदला ले रहे हैं।"

"मासूम बच्ची।" शान्तिप्रसाद ने एक जोरदार कहकहा लगाया, फिर वोले—"वह भी एक मासूम बच्ची थी, केदारनाथ, जिसने अपनी खूबसूरत गरदन में फंदा डाल लिया था और जिसकी लाश हवा के जोर से आगे-पीछे झूल रही थी।"

"म…मैं समझता था कि आपने मुझे क्षमा कर दिया है और आप सब कुछ भूल गए हैं।"

"बहुत अच्छे। इस सादगी पर कौन न मर जाए ऐ खुदा। तो मैं भूल जाऊं कि मेरी जवान लड़की ने आत्महत्या की थी ! मैं भूल जाऊं कि मेरी धर्मपत्नी इस गम को सहन न कर सकी ! मैं भूल

जाऊं कि उधर तुम अपने महल में कहकहे लगा रहे थे उस समय जब कि मेरा घर श्मशान बन चुका था।"

"उस अन्याय का बदला लेना है तो मेरे लड़के से लो, मुझसे लो मेरी मासूम बच्ची ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

"और मेरी मासूम बच्ची ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था?"

"शान्तिप्रसादजी!" सेठ केदारनाथ घिघियाने लगे—"भगवान के लिए दया कीजिए, शीला को मैंने बड़े लाड़-प्यार से पाला है।"

"जिसे दया कहते हैं उस भावना को मैं अपनी जीवन संगिनी तथा बेटी की चिताओं के साथ जला आया था।"

"तो अब मेरे लिए इसके सिवाय कोई उपाय नहीं कि मैं शीला को यहां से ले जाऊं।"

"अगर हिम्मत हो तो ले जाओ।"

"तो आप उसे नहीं जाने देंगे?"

"हरगिज नहीं।"

"अकारण बात बढ़ाने की कोशिश न कीजिए।"

"बात बढ़नी है तो इसे बढ़ना ही पड़ेगा।"

"मैं जबरदस्ती भी कर सकता हूं।"

"करके देख लीजिए।"

"मैं पुलिस की सहायता भी प्राप्त कर सकता हूं।"

"अपने दिल के सारे अरमान निकालकर देख लीजिए।"

"शान्तिप्रसाद जी!" केदारनाथ गुस्से से बेकाबू होकर बफर उठे।

"चीखने की कोशिश मत कीजिए केदारनाथ। इसे याद रखिए कि अभी मुझ पर आपका एक ऋण है आपको धक्के देकर यहां से निकलवाने का ऋण।"

"मैं···!" सेठ केदारनाथ जोश में कुछ कहते-कहते रुक गए। क्योंकि उनकी दृष्टि शीला पर पड़ गई थी। वह दरवाजे में खड़ी थी और उसके चेहरे पर अच्छे भाव नहीं थे।

"बेटी···!" सेठजी की आवाज भर्रा गई। वह उसकी ओर लपके।

शीला अपने स्थान पर निश्चल खड़ी रही।

केदारनाथ ठिठक कर हैरत से उसे देखने लगे। उनका विचार था कि शीला उन्हें देखते ही दौड़कर उनसे लिपट जाएगी और फूट-फूट कर रोने लगेगी।

कमरे में एक भयानक सन्नाटा छा गया था और शान्तिप्रसाद के अधरों पर मुस्कान फैल गई थी।

"शीला ?" रायसाहब ने होंठ खोले।

"क्या बात है ?" शीला का कठोर स्वर था।

"मैं तुम्हें लेने आया हूं बेटी।"

"क्यों ?"

"मुझे सब पता चल चुका है मेरी बच्ची—मुझे मालूम हो गया है कि यह लोग तेरे साथ क्या-क्या ज़ुल्म करते हैं। मुझे पता चल गया है कि मेरी फूल-सी बच्ची जिसे शादी से पहले किसी ने उंगली भी नहीं लगाई थी अब अपने पति से लातें, मुक्के और थप्पड़ उपहार स्वरूप प्राप्त करती है। मुझे पता चल गया है कि तू रात-दिन इनकी सेवा करती है और बदले में तुझे फाके मिलते हैं। तू इस घर का सारा काम-काज नौकरों की तरह करती है जबकि शादी से पहले मैंने तुझे कभी एक कप चाय भी नहीं बनाने दी थी।"

"किसने बताया है यह सब कुछ आपको ?"

"म···मुझे पता चल गया।"

"मैं पूछ रही हूं किसने बताया यह सब आपको ?"

"किसको नहीं मालूम···कौन नहीं जानता यह सब कुछ। इस मुहल्ले के बच्चे-बच्चे को मालूम है कि···।"

"और यह सब गलत है।"

"क···क्या ?" सेठजी आश्चर्यचकित स्वर में बोले।

"जो कुछ भी आप कह रहे हैं सब गलत है सच्चाई यह है कि मैं यहां बहुत आराम से हूं।"

"श···शीला !"

"कुछ और मालूम करना है आपको ?"

"त···तुम मेरे साथ नहीं चलोगी !" केदारनाथ ने चकित स्वर में पूछा।

"कहां ?"

"अपने घर।"

"घर···मेरा घर तो यहीं पर है।"

"यह तुम्हारा घर नहीं बेटी···नरक है यह तुम्हारे लिए··· यह लोग तुम्हें लाश में बदल कर ही चैन लेंगे।"

"पापा···।" शीला कठोर आवाज़ में बोली—"इसके पहले कि मैं कोई गुस्ताखी करूं आप मेहरबानी करके यहां से चले जाइए।"

"शीला होश में आओ!"

"मैं बिल्कुल होश में हूं पापा···आईन्दा मैं यह बिल्कुल सहन नहीं करूंगी कि मेरे पति या मेरे ससुरजी के लिए आप अपने होंठों से कोई भी गलत बात निकालें···आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि अब वही दोनों मेरे सब कुछ हैं। मुझे जीना है तो इनके साथ और मरना है तो इनके साथ···हम दोनों यहां हंसी-खुशी रहते हैं या लड़-झगड़कर···यह हमारा अपना मामला है और इसमें बोलने का अधिकार न आपको है और न किसी व्यक्ति को···जहां तक मेरे जाने का सम्बन्ध है तो इसे सुन लीजिए कि इस घर से शीला नहीं जा सकती···हां उसकी अर्थी जा सकती है···वह मेरा आखिरी और अटल फैसला है।"

सेठ केदारनाथ के चेहरे पर सन्नाटा फैल गया।

दो आंसू उनकी आंखों में इस प्रकार कांप रहे थे जैसे बस अब गिरने ही वाले हों।

° ° °

"मैं सब कुछ जानता हूं···।" शेखर शीला की तरफ पलटकर गुर्राया—"यह भी कि तुम्हारे मन में क्या है और बाहर क्या है ···अपने पापा को नाटकीय ढंग से इस घर से वापस भेजकर तुम पिताजी का दिल पिघला सकती हो मेरा नहीं···वह तुम्हारे साथ नरम हो सकते हैं, मैं नहीं।"

"मैंने कब कहा···कि आप मेरे साथ नरमी बरतिये।" शीला बोली—"मैं तो केवल यह चाहती थी कि आप थके-हारे घर लौटे हैं एक कप चाय पी लें।"

शेखर कुछ क्षणों तक उसे देखता रहा—फिर कोट उतारते

लगा।

शीला ने आगे बढ़कर उससे कोट ले लिया।

शेखर ईजी चेयर पर लेट-सा गया और टाई की नाट ढीली करता हुआ शीला को देखकर बोला—"चाय पिलाना चाहती हो मुझे···मेरी थकन का बहुत ख्याल है। परन्तु यदि मैं तुमसे यह पूछूं कि इस चाय में विष तो नहीं मिला हुआ···!"

"नहीं।"

"प्रमाण!"

"प्रमाण वह देता है जो चोर हुआ करता है।"

"जब तुम्हारी यारी एक डाक्टर से है तो क्यों न शक करूं कि मुझे दी जाने वाली किसी भी वस्तु में विष हो सकता है।"

शीला के होंठ कंपकंपाने लगे उसने भर्राई हुई आवाज में कहा —"क्या आपके सीने में दिल न होकर पत्थर है···क्या दया, न्याय और धर्म की कोई भी भावना आपके हृदय में नहीं रही। आप मेरे धैर्य की कितनी बड़ी परीक्षा लेते हैं। ऐसी गालियां देते हैं आप मुझे जिन्हें कोई भी भारतीय नारी सहन नहीं कर सकती···सुनते हैं कसाई भी बकरे को गरदन पर छुरी फेरने से पहले उसे चुमकारता है। हाथ फेरता है···पानी पिलाता है···मगर आप··· आप···।"

"हां···मैं···मैं!" शेखर गुर्राया—"इसलिए कि विश्वासघात किया है तुमने मेरे साथ···वह कौन था जो शादी से पहले डा० दीपक को देवता कहा करता था···वह तुम ही तो थीं···जहांगीर-सिंह और विक्रमसिंह के बीच अपनी घृणित भूमिका निभाने वाली दमयन्ती। वह तुम ही तो हो जिसने मुझे बड़े सुन्दर ढंग से कत्ल करवाया है। पिछले जमाने में जहांगीर के हाथ में तलवार थी और तुम···तुमने आज के जहांगीरसिंह के हाथों में वह यन्त्र दे दिये जिनसे रोगियों को मौत के मुंह से बचाने का पवित्र कार्य सम्पन्न किया जाता है। और कहा तुमने जहांगीरसिंह से कि वह मेरी हत्या कर दे···वह मेरे पुरुषत्व की हत्या कर दे···वह मुझे इस प्रकार बरबाद कर डाले कि मैं एक चलती-फिरती लाश बन कर रह जाऊं और यह काम तुमने उस जहांगीरसिंह से करवाया

जो तुम्हारे कथानुसार देवता है···एक ऐसा देवता जिसने रोग तथा मुत्यु से अंतिम सांस तक लड़ते रहने की प्रतिज्ञा की थी। एक ऐसा डाक्टर जिसकी शराफत, ईमानदारी, सिद्धान्त तथा ऊंचे आदर्श एक प्राइवेट वार्ड में दम तोड़ बैठे जबकि वर्तमान दमयन्ती ने उसे आंखों ही आंखों में इशारा कर दिया।"

चाय की प्याली शीला के हाथ से छूट पड़ी उसका सर ज़ोर से चकराने लगा—आंखों के सामने नीले-पीले बिन्दु चकराने लगे और फिर वह धड़ाम से फर्श पर गिर पड़ी।

• • •

"यह क्या बकवास लगा रखी है···दीपक···ऐ दीपक···अबे मजनूं की औलाद।" हरीश दांत पीसने लगा।

"क्या बात है क्यों तंग कर रहे हो।"

"शुक्र है कि तुमने होंठ तो खोले···वरना मैं तो समझ रहा था कि यह तुम नहीं, तुम्हारा चित्र है जो अपने चौखटे से बाहर आकर ईजी चेयर पर अधलेटी मुद्रा में सिगरेट पी रहा है।"

दीपक के अधरों पर फीकी-सी मुस्कान फैल गई।

"यह तुम थे कहां···?" हरीश ने पूछा—"इतनी देर से आवाजें दे रहा हूं।"

"यहीं तो हूं···।"

"किसके ख्यालों में खोए हुए थे।"

"किसी के भी नहीं।"

"झूठ मत बोलो—तुम्हारे सिद्धान्तों के अनुसार यह पाप होता है।"

"और तुम्हारे सिद्धान्तों के अनुसार !"

"अत्यन्त लाभदायक···मेरा दावा है कि पेटेन्ट झूठ बोलने वाला आदमी कभी भी कब्ज़ का शिकार नहीं हो सकता।"

दीपक हंस पड़ा।

"बताओ किन विचारों में खोए हुए थे।"

दीपक ने एक गहरी सांस लेकर कहा—"आज उसका जन्म दिन है।"

"धत्तेरे की···अबे ओ उल्लू···दुनिया चांद पर पहुंच चुकी है

ग्रौर तू···एक ईजी चेयर पर अधलेटा सिगरेट पीता हुआ सोच रहा है कि आज उसका जन्म दिन है।"

"मेरे लिए तो वही चांद है···।"

"हाय···हाय भई तुम्हारे वह आदर्श क्या हुए···च···च··· किसी शरीफ आदमी की पत्नी के लिए ऐसा कहते हुए शर्म नहीं आती।"

दीपक ने उसकी बात अनसुनी कर दी और एक गहरी सांस लेकर बोला—"काश आज के दिन कोई मेरी तरफ से उसे कह आता—

"तुम सलामत रहो हजार बरस।
हर बरस के हों दिन पचास हज़ार।।"

हरीश सर पकड़कर बोला—

"मरीज़े इश्क पर लानत खुदा की।
मरज़ बढ़ता गया जूं-जूं दवा की।"

o o o

लिंकिंग स्ट्रीट पर पहुंच कर तो शेखर का पूरा शरीर गुस्से से थर-थर कांपने लगा—उसका जी चाहा कि वह लपक कर शीला को दबोच ले और यहीं सड़क पर उसका गला घोंट दे। अब इस बात में क्या शक रह गया था कि वह डाक्टर दीपक से ही मिलने जा रही है। लिंकिंग स्ट्रीट के बाद वाली सड़क पर ही तो लुंगिया हास्पिटल था।

वह सतर्क मुद्रा में शीला का पीछा करता रहा।

"आज मैं इसे रंगे हाथों पकड़ूंगा।" उसने दांत पीसकर अपने आपसे कहा।

पिछले दो-तीन दिनों से वह शीला के चेहरे पर बेचैनी के भाव देख रहा था। लगता था वह कहीं जाना चाहती हो और उसे अवसर न मिल रहा हो। अतः आज उसने जान-बूझकर ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी थी कि शीला को अवसर मिल गया और फिर वही हुआ जिसका उसे डर था और अब वह लुंगिया हास्पिटल की ओर खिंची चली जा रही थी।

दीपक अपनी कुरसी से उछल पड़ा।

उसकी आंखें हैरत से फटती चली गईं और उसने कहा—"यह सब झूठ है।"

"और यह भी झूठ है···।" शीला गुर्राई—"कि वह अपना सब कुछ खो चुके हैं। पागल हो गए हैं शायद वह···दीपक बाबू मैं आपको आकाश की भांति महान समझा करती थी परन्तु अब पता चला कि आप क्या हैं। आप जो इन्तकाम की आग में अंधे होकर···।"

"मैं भगवान की सौगंध खाकर कहता हूं कि यह आरोप है मुझ पर···यह सब झूठ है।"

"आपके कसम खा लेने से हकीकत बदल नहीं सकती···मुझे कहने दीजिए कि वह आप हैं जिसने अपने हाथ तापने के लिए मेरे घर में आग लगा दी···अगर आपको ऐसी ही जलन थी तो मुझसे कह देते आप ··विष दे देते मुझे···मैं अपनी सबसे ज्यादा प्यारी चीज़ की कसम खाकर कहती हूं कि आपके उपकार का बदला चुकाने के लिए तुरन्त वह विष पी जाती।"

"शीला···!"

"नाम मत लीजिए मेरा अपनी अपवित्र जबान से···।" शीला गुर्राई—"मैं आपको केवल यह बताने आई हूं कि आप कितने नीच हैं—कितना बड़ा पाप किया था मैंने कि आपको अपने पति से भी ज्यादा महान समझा था···परन्तु आज पता चला कि महान तो वह है···वह अभागा जो यहां आया और अपना सब कुछ बरबाद करके चला गया।"

दीपक की आंखों में आंसू कंपकंपाने लगे—बेकाबू-सा होकर वह अपनी उंगलियां चटखाने लगा।

"इतना बड़ा अत्याचार करने से पहले कम से कम यह तो सोच लेते कि आप एक डाक्टर हैं जिसका धर्म रोगी के साथ ईमानदार रहना हुआ करता है।"

"मैं तुम्हें कैसे समझाऊं···कि यह सब कुछ झूठ है तुम मुझे गलत समझ रही हो।"

"इसकी ज़रूरत नहीं है···आपके इस सुन्दर मुखड़े के पीछे छुपा हुआ घिनौना चेहरा मुझे नज़र आ गया है···दुःख तो यह है

कि लूटा उसी ने जिससे दावा था हमदर्दी का।"

"काश मैं तुम्हें अपना दिल चीरकर दिखा सकूं।"

"स्याही होगी वहां···पापों की स्याही, कहते हैं विष दे दे···विश्वास न दे। मगर आप तो वह हैं जिसने पहले विश्वास दिया···फिर विष दिया। कितने नीच हैं आप···हमदर्द बनते हैं और गले पर छुरी भी फेरते जाते हैं।"

दीपक की आंखों में आंसू चमकते रहे—उन आंसुओं की चमक ऐनक के मोटे शीशे भी न रोक सके उसने मुस्करा कर कहा—"शायद पिछले जन्म में मैंने ढेर सारे पाप किए थे। न जाने कब तक उनका प्रायश्चित करता रहूंगा···अगर तुम्हें ज़िद है तो मैं यह आरोप भी अपने सर लेता हूं···एक बार वचन दिया था तुम्हें और एक आरोप अपने सर लिया था···आज फिर वचन देता हूं कि तुम्हारे शेखर को वह सब कुछ वापस लौटा दूंगा जो वह खो चुका है···चाहे···चाहे इसके लिए मुझे अपनी जान क्यों न देनी पड़े।"

"बहुत खूब···तो आप चाहते हैं कि मैं उन्हें यहां लाऊं ताकि आप रही-सही कसर भी पूरी कर डालें।"

"मुझ पर विश्वास करो शीला···मैं···।"

"एक बार विश्वास करके देख चुकी हूं···शत्रु वार करता है तो मनुष्य की छाती गज भर की ही रहती है···यह सोचकर कि शत्रु ही तो है इसका काम ही वार करना है···परन्तु जब अपने वार करते हैं तो छाती फट जाती है···मनुष्य पागल हो जाता है और उसे स्वयं अपने आप पर भी विश्वास नहीं रह जाता···।"

"जब मैं वचन दे रहा हूं तो···।"

"मुझे आपके वचन पर भरोसा नहीं है।"

"हालांकि इससे पहले एक बार वचन देकर अपना सब कुछ बरबाद कर चुका हूं।"

"उसी का बदला तो लिया है आपने।"

"शीला···!" डा॰ दीपक की आवाज़ भर्रा गई।

"आपने फिर मेरा नाम लिया···आपने···।"

"इतनी निर्दयी न बनो शीला···इतनी निर्दयी तो न बनो···मेरी आंखों में देखो और बताओ···ईमानदारी से बताओ क्या मैं

वही नज़र आता हूं जो तुम कह रही हो, क्या मैं इतना नीच हूं ?"

"हां···हां···हां।" शीला गरजकर बोली।

"नहीं तुम झूठ बोल रही हो···अगर तुम्हारे दिल में भी यही होता तो तुम यहां न आतीं।"

"मैंने चाहा था कि मैं यहां न आऊं··परन्तु अब हालात ने मजबूर कर दिया है कि मैं आपके पास आऊं और आपसे अपने लिए विष की मांग करूं।"

"गलतफहमी की आग ने तुम्हें अन्धा कर दिया है लेकिन मैं भी वचन देता हूं कि एक बार फिर तुम्हारा विश्वास प्राप्त करूंगा। चाहे मुझे अपनी जान देनी पड़े, लेकिन एक बार हां, केवल एक बार मैं तुम्हारे होंठों से कहलवाऊंगा कि मैं नीच नहीं हूं, मैं कमीना नहीं हूं···चाहे इसके लिए मुझे शेखर के पैर ही क्यों न पकड़ने पड़ें।"

"मुझे यकीन है कि ऐसा कभी नहीं होगा।"

"ऐसा होगा, ऐसा अवश्य होगा क्योंकि भगवान के घर देर है अंधेर नहीं। वह मेरी मुहब्बत का इतना बड़ा अपमान होते हुए न देख सकेगा।"

"मुहब्बत !" शीला ने हंसी उड़ाने वाले अंदाज में कहा—"आप जैसे लोगों ने मुहब्बत को इतना नीचे पहुंचा दिया है कि शायद आने वाली पीढ़ियां मुहब्बत का नाम लेते हुए भी लजाएंगी। आपने मुहब्बत को अपनी वासना की तृप्ति का साधन बना लिया है। मुहब्बत का नाम लेकर आप जैसे लोगों ने न जाने कितनी शीलाओं के हंसते-खेलते घर तबाह कर दिए होंगे। अपनी हविस के लालच में अंधे होकर आप जैसों ने न जाने कितनी अबलाओं को जीते जी मौत के घाट उतार दिया है। आपकी हरकतों ने आज मुझे मेरे पति की नज़रों से गिरा दिया है। मुझे एक चलती-फिरती लाश में बदल दिया है। मेरा रोम-रोम मातम कर रहा है उस विश्वासघात के लिए जो अनजाने में मैं अपने पति के साथ कर बैठी। वह नीच और अभागिन मैं ही तो थी जो अपने देवता के सामने आपकी प्रशंसा करती थी। आपके आदर्शों के गुण गाती थी और वह मेरा देवता समान पति था जिसने यह सब कुछ सुनकर भी

मुझसे शादी की। और वह आप हैं जिसने आज मुझे बीच मंझधार में ला खड़ा किया है। पापों की गठरी बनाकर इस दशा में पहुंचा कर कि आज मुझे उनसे नज़रें मिलाने में भी शर्म महसूस होती है।"

और बाहर दरवाजे से टेक लगाए खड़ा शेखर वह सारी बातें सुन रहा था। उसकी आंखों में आंसू झिलमिला रहे थे।

"मैं जा रही हूं।" अन्दर से शीला की आवाज आई—"परन्तु जाने से पहले इतना बता देना चाहती हूं कि अब यदि मेरे पति के जीवन पर आपकी मद्धिम-सी छाया भी पड़ी तो मेरा इन्तकाम बहुत भयंकर होगा। मैं आपका खून भी पी जाऊंगी।"

इससे पहले कि शीला बाहर आती, शेखर तेजी से सीढ़ियों की ओर लपका।

° ° °

"कौन?" शान्तिप्रसाद ने चौंककर पूछा।

"मैं हूं, पिताजी।" बाहर से शीला की आवाज आई।

"आ जाओ।"

दरवाजा खुला और शीला ने हाथों में भोजन का थाल लिए अन्दर प्रवेश किया। उसने अपने सर पर साड़ी का पल्ला डाल रखा था। आगे बढ़कर उसने थाल मेज पर रख दिया।

शान्तिप्रसाद की निगाहें कनखियों से उसे देखती रही थीं। जब वह जाने लगी तो बोले—"सुनो!"

"ज···जी।"

"इधर आओ।"

शीला सर झुकाए उनकी ओर बढ़ी। करीब पहुंच कर रुक गई।

"तुमने खाना खाया?"

"ज···ज···जी नहीं।"

"क्यों?"

"ख-खा···खा लूंगी।"

शान्तिप्रसाद खड़े हो गए और बेचैनी के साथ टहलने लगे। इस समय उनके मन में एक तूफान-सा उठा हुआ था। रह-रहकर उन्हें सुधा की याद आ रही थी। चलते-चलते वह ठिठक पड़े और

बोले—"बहू !"

"ज···ज···जी।"

"क-क···क्या तुम मुझे क्षमा कर सकोगी बेटी ?" शान्तिप्रसाद की आवाज भर्रा गई।

"प···पि···पिताजी···यह आप क्या कर रहे हैं। भगवान के लिए मुझ पर पाप तो न चढ़ाइए।"

"नहीं···बेटी, मैं जो कुछ कह रहा हूं वह ठीक है···अपने पिताजी के साथ तुमने जो रवैया अपनाया था। उसने मेरी आंखें खोल दी हैं। तुमने मुझे नेकी का रास्ता दिखाया है बहू। तुमने मुझ बूढ़े को बताया है कि त्याग और बलिदान से बड़ा इन्तकाम और कोई नहीं होता। अपनी बेटी के साथ किये गए अन्याय का बदला मैंने तुमसे लिया। अपने इन्तकाम की आग बुझाने के लिए मैंने तुम्हारे जीवन में विष घोला, परन्तु मेरे अत्याचारों को भुला कर अपने पिताजी के सामने तुमने मुझ बूढ़े को यह पाठ पढ़ाया कि सबसे बड़ा इन्तकाम क्षमा कर देना हुआ करता है—मैं अपनी बच्ची की कसम खाकर कहता हूं बहू कि उस दिन से आज तक चैन की नींद नसीब नहीं हुई है। मेरी अन्तर्रात्मा बार-बार मुझे धिक्कारती रही है···इसलिए···इसलिए।"

"प···पिताजी।"

"मुझे क्षमा कर दो बेटी। यदि बहू के रूप में मुझे क्षमा नहीं सकतीं तो मेरी सुधा बनकर मुझे क्षमा कर दो। इस अभागे बाप को शान्ति दान दे दो।"

शीला शान्तिप्रसाद के चरणों में गिर पड़ी और उनके चरण पकड़ कर बोली—"भगवान के लिए मुझ पर पाप न चढ़ाइये पिताजी मैं सब कुछ सहन कर सकती हूं, मगर···मगर।"

शान्तिप्रसाद के बूढ़े चेहरे पर आंसू उमड़े चले आ रहे थे।

o o o

तकिए से टेक लगाकर बैठने के बाद शेखर ने सिरहाने रखी हुई मेज का टेबल लैम्प जला दिया था और एक उपन्यास पढ़ने लगा था। देखने में तो ऐसा ही लगता था कि वह उपन्यास पढ़ रहा है। परन्तु वास्तविकता यह थी कि वह कनखियों से शीला की एक-एक

हरकत देख रहा था।

उसे खाना खिलाने के बाद शीला ने उसका बचा हुआ खाना खाकर बर्तन धो डाले थे और अब हमेशा की तरह वह जमीन पर अपने लिए बिस्तर बिछा रही थी। इन कामों को करते हुए कितनी शान्त थी वह जैसे उसे कोई गम न हो, कोई शिकायत न हो, कोई कष्ट न हो।

और शेखर को अपनी नीचता याद आ रही थी। इस लड़की को उसने क्या से क्या बना डाला था। यह लड़की जो शादी से पहले स्वयं उठकर एक गिलास पानी भी नहीं पिया करती थी। जिसके नखरे आकाश से बातें किया करते थे। सोचते-सोचते वह चौंक पड़ा। शीला सदा की भांति उसके पलंग पर आ बैठी थी और उसके पैर दबाने लगी थी।

वह कनखियों से उसे देखता रहा—देखता रहा फिर बोला—"शीला!"

"ज···जी।"

"इधर आओ।"

"क···क्या?" शीला हकलाकर रह गई।

"इधर आओ।" शेखर गुर्राया।

वह जल्दी से उसके समीप पहुंच गई।

"और निकट आओ।"

वह उसके और निकट हो गई।

"और निकट।"

वह उससे बिल्कुल सट गई।

शेखर उसकी आंखों में झांकने लगा। उन आंखों में जिनकी पलकें शायद भय के कारण कांप रही थीं। वह देखने लगा उस सुन्दर मुखड़े को जो भय से पीला पड़ गया था। फिर उसके हाथ कंपकंपाते हुए उठे, एक झटके के साथ उसने शीला को अपनी ओर खींचा और अपनी छाती से लिपटा कर इतना भींचा कि शीला को ऐसा लगा जैसे उसका दम घुट जाएगा।

वह पागलों की तरह उसकी पीठ और उसके सर पर हाथ फेरने लगा। जैसे कोई खोई हुई दौलत मिल जाए—यह दशा थी शीला

की। वचन देने के बाद आज पहली बार उसकी आंखों में आंसू उमड़ आए थे परन्तु यह आंसू खुशी के आंसू थे।

"शीला ?"

"हूं।"

"नाराज़ हो मुझसे…है ना !"

"नहीं।"

"झूठ बोल रही हो।"

"कैसी भी कसम ले लीजिए।"

"नाराज़ नहीं हो !"

"नहीं।"

"तुम्हें नफरत नहीं हुई मुझसे। गुस्सा नहीं आया मुझ पर !"

"क्या कोई ऐसी अभागिन पुजारिन भी होती है इस संसार में कि जो अपने देवता से नफरत करने लगे।"

"शीला…शीला।" शेखर पागलों की तरह बड़बड़ाने लगा। भावावेश से उसका दिल भर आया और वह फूट-फूटकर रोने लगा।

"अरे…अरे यह क्या कर रहे हैं आप ?"

"मुझे रोने दो शीला—शायद इसी तरह मेरे पाप धुल जाएं।"

"नहीं आपको मेरी सौगंध।"

"शीला।"

"मान जाइये ना…देखिए मैंने आपको अपनी क़सम दी है। मरा मुंह देखें आप मेरा अगर…।"

शेखर ने जल्दी से उसके होंठों पर हाथ रख दिया। फिर अपने आंसू पोंछने लगा।

"माफी तो मुझे मांगनी चाहिए आपसे।"

"क्यों ?"

"पाप किया था मैंने।"

"पाप…कौन-सा पाप ?"

"उसकी प्रशंसा की थी…उस कमीने इन्सान की जिसने हमारी ज़िन्दगियों में विष घोल दिया है।"

शेखर की आंखों के सामने दीपक का चेहरा घूमने लगा। कितनी सेवा की उसने शेखर की, और बेचारे को क्या नतीजा

मिला।

"मुझे माफ कर दीजिए। मैं वचन देती हूं कि कभी उस कमीने का नाम अपनी जबान पर नहीं लाऊंगी।"

"नहीं शीला, हो सकता है कि गलती मेरी हो। तुम दीपक को दोष क्यों देती हो?"

"मुझे मालूम है कि यह सब कुछ उसका किया-धरा है। आखिर आपका एक्सीडेन्ट उसके हास्पिटल के करीब ही क्यों हुआ?"

"इसे संयोग भी कहा जा सकता है।"

"मैं नहीं मान सकती।"

"परन्तु अकारण किसी पर शक करना बुरा होता है।"

"शक ··मुझे यकीन है कि उसने आप···।"

"क्या तुमने मुझे माफ नहीं किया।" शेखर ने उसकी बात काट कर कहा।

"क···क्या मतलब?"

"यह तुम आप-आप क्या कर रही हो। जब दिलों में फर्क होता है तब···?"

"यह बात तो नहीं।"

"फिर?"

"अच्छा अब नहीं कहूंगी आप।"

शेखर उसे देखता रहा। फिर बोला—"कितना परिवर्तन हो गया है तुममें। पहले तुम कितनी जिद्दी थीं परन्तु अब हर बात तुरन्त मान लेती हो। हर बात पर सर झुका देती हो।"

शीला ने कोई उत्तर नहीं दिया, बल्कि शेखर के सीने में अपना मुंह छुपा लिया।"

"शीला!"

"हूं।"

"पिताजी ने मुझे सब बता दिया है। उन्होंने आज्ञा दी है कि अब मैं तुम्हें तनिक भी कष्ट न होने दूं और वह कह रहे थे कि मैं तुमसे सख्ती के साथ पूछूं कि तुमने अपने पापा के साथ इस प्रकार का दुर्व्यवहार क्यों किया था।"

"म···मेरी इच्छा।"

"परन्तु क्यों ?"

"उनका स्वर ऐसा था जिससे मुझे महसूस हुआ कि वह पिता जी का अपमान कर रहे हैं।"

"कुछ भी था वह बहरहाल तुम्हारे पिता हैं।"

"मगर इसका मतलब यह तो नहीं कि···।"

"मैं कुछ सुनना नहीं चाहता—तुम्हें उनसे क्षमा मांगनी पड़ेगी ···कल ही मैं तुम्हें लेकर उनके पास जाऊंगा।"

"मैं नहीं जाऊंगी।"

"क्यों ?"

"उस समय तक नहीं जाऊंगी जब तक पिताजी खुद अपनी खुशी से मुझे इजाजत न दें।"

"उन्होंने ही तो कहा है कि मैं तुम्हें तुम्हारे पापा के पास ले जाऊं और वहां जाकर तुम उनसे माफी मांगो। तुम खुद सोचो कि उनके दिल पर क्या बीत रही होगी।"

"यदि पिताजी ने आज्ञा दी है तो मैं अवश्य उनकी आज्ञा का पालन करूंगी।"

शेखर ने उसकी ठोड़ी पकड़कर उसका चेहरा ऊंचा किया और उसकी आंखों में देखकर पूछने लगा—"और मेरी आज्ञा नहीं मानोगी ?"

"ऊं हूं।" शीला ने इन्कार में गरदन हिला दी।

शेखर की हंसी छूट पड़ी। उसे शीला की यह अदा इतनी भायी कि उसने शीला को जोर से लिपटा लिया फिर कुछ देर बाद वह बड़े प्यार में बोला—"शीला !"

"हूं।"

"मैंने कई डाक्टरों से बात की है।"

"क···किसलिए ?"

"अपने लिए।"

"फिर ?"

"वह सब कहते हैं कि मैं ठीक हो जाऊंगा—परन्तु इसके लिए आपरेशन करना पड़ेगा।"

"आपरेशन !" शीला उछल पड़ी।

"हां, मगर खतरे की कोई बात नहीं।"

"न···नहीं मैं तुम्हें आपरेशन हरगिज नहीं कराने दूंगी।"

"तुमने तो पढ़-लिखकर भी डुबोया। क्या जाहिलों की सी बातें करती हो—सुनो मैं चाहता हूं कि आपरेशन हो जाए परन्तु पिताजी को खबर न हो।"

"न जाने क्यों मेरा दिल डर रहा है।"

"फिर वही मूर्खता की बात···मैंने कहा ना कि खतरे की कोई बात नहीं। परन्तु एक समस्या है।"

"क्या—!"

"अनेक डाक्टरों का मत है कि मैं यह आपरेशन डा० दीपक से कराऊं।"

"क···क्या ?" शीला का मुंह हैरत से खुला गया।"

"हां शीला···बड़े-बड़े अनुभवी डाक्टर भी उसकी योग्यता का लोहा मानते हैं और मेरा ख्याल है कि···।"

"ऐसा कभी नहीं हो सकता···कभी नहीं।"

"क्यों ?"

"मैं जान-बूझकर तुम्हें मौत के मुंह में नहीं भेज सकती।"

"तुम्हें गलतफहमी है शीला। मैं जो तुमसे दीपक के लिए अनाप-शनाप बकता रहता था वह सब झूठ था। बहुत से डाक्टरों ने मुझसे कहा है कि हो सकता है कि मैंने यह शक्ति उस एक्सीडेन्ट के कारण ही खोई हो।"

"कुछ भी हो मैं तुमको डा० दीपक से आपरेशन नहीं कराने दूंगी। नगर भर में बस वही एक डाक्टर नहीं रह गया है।"

"सफल आपरेशन वही कर सकता है।"

"क्या तुमने मुझे बच्चा समझ रखा है ?"

शेखर उसके प्रश्न का उत्तर गोल कर गया और बोला—"आज मैं डा० दीपक से मिला था।"

"न···न नहीं !"

"यह हकीकत है कि मैं उससे मिला था।"

"फ···फिर ?"

"उसने वायदा किया है कि वह आपरेशन करेगा।"

"हां-हां वह तो चाहता है कि उसे बहाना मिले ताकि वह···वह तुम्हें···।"

"उसने कहा है कि वह लिखकर देगा कि आपरेशन सफल रहेगा।"

"बकवास कर रहा है वह···झूठ बोलकर तुम्हें फांसना चाहता है भगवान के लिए होश में आओ शेखर—आखिर तुम्हें किस तरह विश्वास दिलाऊं कि वह मनुष्य नहीं राक्षस है।"

"मुझे भली-भांति मालूम है कि वह मनुष्य ही है।"

"यह तुम्हारी भूल है।"

"इसका जवाब तो वक्त देगा।"

"नहीं शेखर नहीं। पागल मत बनो। मैं तुम्हारे पैर पकड़ती हूं। यह कहकर शीला सिसकने लगी। उसने बिलख-बिलख कर रोते हुए कहा—"भगवान के लिए उस राक्षस का ख्याल छोड़ दो शेखर।"

"तुम्हारी कसम खाकर कहता हूं शीला कि यदि आपरेशन कराऊंगा तो केवल उससे। मेरी आंखें धोखा नहीं खा सकतीं। वह राक्षस नहीं है।"

शीला बिलख-बिलख कर रोती रही।

० ० ०

शीला के चेहरे पर नफरत के भाव थे। मेज की टाप पर दोनों हाथ रखकर वह दीपक की ओर झुकी और गुर्राई—"तो आपने उनको फांस ही लिया···उनके गिर्द अपने षड्यन्त्र का जाल फैला ही दिया।"

"श···श···शीला।"

"मर गई शीला···वह शीला मर चुकी है जिसे तुम पर विश्वास था और अब जो शीला है वह तुम्हें बता देना चाहती है कि यदि तुमने उसका सुहाग उजाड़ने की कोशिश की तो वह तुम्हारा खून पी जाएगी।"

"मुझ पर भरोसा रखो शीला···भगवान ने चाहा तो आपरेशन सफल होगा।"

"भगवान ने चाहा तो···।" शीला ने एक-एक शब्द पर जोर

देते हुए कहा—"परन्तु यदि तुमने न चाहा तो ?"

दीपक अपनी कुर्सी छोड़कर खड़ा हो गया और बोला—"भगवान न करे—यदि शेखर को कुछ हो गया तो आपरेशन थियेटर से पहले डा० दीपक की लाश निकलेगी और उसके बाद शेखर की।"

"आप···आप आखिर आपरेशन से इन्कार क्यों नहीं कर देते।"

"इसलिए कि डा० दीपक ने अपने सिद्धान्तों तथा आदर्शों की रक्षा के लिए तथा अपना खोया हुआ विश्वास पुनः प्राप्त करने के लिए समय की प्रत्येक चुनौती का सामना किया है। इसलिए कि एक आदर्शवादी मनुष्य जीवन की प्रत्येक बाजी हार सकता है परन्तु किसी को इस बात की अनुमति हरगिज नहीं दे सकता कि वह उस की ईमानदारी और सच्चाई पर उंगली उठाए अथवा आरोप लगाये।"

"आप कितना गरज रहे हैं मगर क्या आपको यह नहीं मालूम कि गरजने वाले बादल बरसा नहीं करते।"

"तुमने गरजने वाले बादलों को बरसते नहीं देखा जब वह बरसने पर आते हैं तो चारों ओर जल-थल हो जाता है और वह अपने साथ इस विश्वास को बहा ले जाते हैं कि गरजने वाले बादल बरसा नहीं करते।"

"और जब आप बरसेंगे तो मेरे ध्यान से अपने साथ मेरी सारी खुशियां बहा ले जायेंगे।"

"ऐसा कभी नहीं होगा शीला···ऐसा कभी नहीं होगा···?"

शीला का चेहरा आंसुओं को रोकने की कोशिश में बिगड़ने लगा वह भर्राई हुई आवाज में बोली—"कितना भयानक मजाक कर रहा है भाग्य मेरे साथ।"

० ० ०

"और तुमने वह सब कुछ सुना जो उसने कहा।" हरीश ने होंठ सिकोड़कर बोला—"वह सारे निराधार आरोप जो उसने तुम पर लगाए, वह सारी बकवास जो शुरू से लेकर आखिर तक झूठ थी ···एहसान फरामोशी से भरपूर वह भाषण जो घृणा के पैरों पर दौड़ता रहा।"

दीपक सर हिलाने लगा।

"और इसके बावजूद तुम शेखर का आपरेशन करने पर राजी हो गए।"

"हां।"

"लेकिन मैं पूछता हूं क्यों···ऐसा किसलिए जबकि प्रत्येक बलिदान का बदला तुम्हें नफरत और सिर्फ नफरत से मिला।"

"उसने कहा था कि उसका भाग्य उसके साथ एक भयानक मजाक कर रहा है···परन्तु मेरा ख्याल है कि यह बात मेरे साथ है और शायद इसीलिए मैं यह सब कुछ कर रहा हूं।"

"भाग्य···भाग्य···भाग्य···क्या तुम्हें भाग्य जैसी बकवास चीज़ पर विश्वास है···क्या तुम्हें यह नहीं मालूम कि मनुष्य चाहे तो हाथ की रेखाओं को भी बदल सकता है।"

"यह असम्भव है हरीश···भाग्य की निर्दयी देवी ने जो फैसला किया हुआ है वह अटल है।"

"कायर···।" हरीश गुर्राया—"तुम एक कायर की भूमिका निभा रहे हो जिसे केवल पराजय मिला करती है।"

"तुम क्या जानो हार का मजा···जो मजा हार में है वह जीत में कहां हो सकता है।"

"दीपक ओ दीपक···भगवान के लिए बुद्धि से काम ले यार ···जीवन हारने के लिए नहीं हुआ करता···जीत के लिए हुआ करता है जिस प्रकार की बेवकूफियां तू कर रहा है वह फिल्मों की हद तक अच्छी लगती हैं।"

"अपने विचारों तथा सिद्धान्तों के मामले में मैं एक चट्टान हूं ···एक अटल चट्टान।"

"तो तुम आपरेशन करोगे।"

"हां।"

"जबकि शीला यह नहीं चाहती कि तुम आपरेशन करो।"

"हां···इसलिए कि उसे मुझ पर विश्वास नहीं रहा।"

"और शेखर को ?"

"उसे विश्वास है। अभी थोड़ी देर पहले उसने मेरा हाथ पकड़ कर मुस्कराते हुए कहा था, मुझे तुम पर पूरा भरोसा है दीपक···।"

"और तुम खुशी से झूम उठे थे···है ना ?"

"हां, यह मेरे लिए बड़े गर्व की बात है।"

हरीश ने दोनों हाथों से अपना सर पकड़ लिया—फिर बोला—"दीपक ,मुझे तुम्हारा मेडिकल एग्जामिनेशन कराना पड़ेगा। अब मुझे पक्का यकीन हो गया है कि तुम्हारे दिमाग में कोई न कोई टेक्निकल खराबी जरूर है।"

"शेखर के आपरेशन से निबटकर मैं तुम्हारा यह भ्रम भी दूर करा दूंगा।"

"अभी क्यों नहीं।"

"बेवकूफियों वाले काम फुर्सत के दिनों में हुआ करते हैं।"

"और मैं शेखर के आपरेशन को तुम्हारी मूर्खता कहूं तो···?"

"मैं इस बकवास पर कान नहीं करूंगा।"

"सुनो···मेरे मस्तिष्क में एक स्कीम है।"

"स्कीम···!"

"हां, एक लाजवाब स्कीम।"

"बको।"

"तुम शेखर का आपरेशन करने से इन्कार कर दो और ऐसा करते हुए शीला पर एहसान ठोक दो।"

"कैसे !"

"उससे कहो···क्योंकि तुम नहीं चाहतीं, इसलिए मैं आपरेशन नहीं करूंगा।"

"हूं···फिर···!"

"लाजमी बात है कि तुम्हारी ओर से निराश होकर शेखर किसी अन्य डाक्टर को टटोलेगा···।"

"हूं···।"

"और उसे इस बात का पता हरगिज नहीं चलेगा कि उस डाक्टर को हरीश भी टटोल रहा है···।"

"क···क्या !" दीपक उछल पड़ा।

"हां···।" हरीश ने मुस्कराकर सर हिलाया—"इस नगर के सारे डाक्टर मेरी मुट्ठी में हैं जिस डाक्टर के पास वह जाएगा···मैं उसे···।"

"हरीश !" दीपक चीखा—"तुम इतना गिर सकते हो !"

"इसे गिरना कहते हैं ?"

"फिर क्या कहते हैं इसे—मुझे कहने दो हरीश कि आज तुमने मुझे बहुत निराश किया है···आज मुझे यह सोचकर अपने आपसे शर्म महसूस हो रही है कि तुम मेरे मित्र हो।"

"परन्तु मुझे शर्म महसूस नहीं हो रही।"

"तुम···तुम एक डाक्टर होकर ऐसी बातें कर रहे हो।"

"हां···इसलिए कि डाक्टर होने के अलावा मैं एक मनुष्य हूं ···मेरे कुछ अरमान हैं···इच्छाएं हैं···आशाएं हैं। कोई व्यक्ति मेरी दुम पर पैर रखकर इस बात की उम्मीद कैसे कर सकता है कि मैं पलटकर उसे काटूंगा नहीं···तुमने कछुए और बिच्छू की कहानी सुनी है अगर बिच्छू कछुए को डंक मार सकता है तो क्या कछुए को पानी में डुबकी लगाने का अधिकार भी नहीं है !"

दीपक के चेहरे पर उलझन के भाव नजर आ रहे थे वह बड़-बड़ाने लगा—"तो क्या शीला का सन्देह ठीक है।"

"क्या मतलब।"

"उसका विचार है कि इस नर्सिंग होम में शेखर के साथ ज्यादती हुई है और यहीं···।"

"तुम कहना क्या चाहते हो !"

"तो क्या वह तुम थे जिसने शेखर के साथ एक रौंगटे खड़े कर देने वाला अपराध किया था।"

"तुम्हारा दिमाग तो ठीक है···!" हरीश ने कहा—वह शानदार ऐक्टिंग कर रहा था।

"हरीश···हरीश सच···सच बताओ क्या वह तुम थे जिसने मेरी पीठ में खंजर घोंपा है।"

"तुम मुझे गालियां दे रहे हो।"

"नहीं !" दीपक पागलों की तरह बोला—"तुम इतना नहीं गिर सकते। ऐसा कभी नहीं हो सकता···तुम ज़बान के बुरे रहे हो दिल के बुरे नहीं हो सकते। मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूं मेरे बचपन का मित्र इतनी गिरी हुई हरकत कर ही नहीं सकता। मुझे क्षमा कर दो हरीश···मैंने तुम पर संदेह करने जैसा पाप किया

था।"

और शायद वह जिन्दगी में पहला अवसर था जबकि हरीश को ऐसा लगा जैसे उसके सिद्धान्तों की इमारत गिर रही हो···जैसे कोई उसके दिल पर घूंसे मार रहा हो, जीवन में सर्वप्रथम उसे दीपक से नजरें मिलाने में शर्म महसूस हो रही थी। परन्तु यह दशा अस्थायी सिद्ध हुई। कुछ देर बाद उसने अपना सर झटका—इस तरह मानो इन मूर्खतापूर्ण विचारों को झटक रहा हो।

० ० ०

लुंगिया हास्पिटल के स्पेशल रूम नम्बर सात के बैंड पर तकिये का सहारा लिए बैठा शेखर इस तरह मुस्करा रहा था जैसे उसे कोई चिन्ता न हो परन्तु उसके करीब स्टूल पर बैठी हुई शीला के चेहरे पर चिन्ता की झलक साफ देखी जा सकती थी। वह शेखर के लिए सेब काट रही थी।

"शीला!"

"हूं।"

"क्या सोच रही हो?"

"क···कुछ नहीं···कुछ भी तो नहीं!"

"कुछ तो सोच रही हो।"

शीला ने चेहरा ऊपर उठाया और डबडबायी हुई आंखों से उसे देखती हुई बोली—"सोच रही हूं कि कल तुम्हारा आपरेशन है।"

"तो इसमें सोचने की क्या बात है?"

"दुर्भाग्य की बात तो यह है कि ऐसे अवसर पर हमारे साथ कोई भी तो नहीं है।"

"तुम कहना क्या चाहती हो?"

"पिताजी से तो हम लोग बहाना बनाकर आ गए हैं कि दो सप्ताह के लिये नगर से बाहर जा रहे हैं और···।"

"तो इसमें परेशानी की क्या बात है?"

"जिसके दिल पर बीतती है वही जानता है शेखर···कल जब तुम्हारा आपरेशन हो रहा होगा तो मुझ पर क्या बीतेगी···और ऐसे में कोई मेरे साथ भी तो नहीं होगा?"

"तो तुम चाहती क्या हो ?"

"यही कि अब भी समय है···मान जाइए आप।"

शेखर कुछ कहते-कहते रुक गया। क्योंकि डा० दीपक कमरे में दाखिल हुआ था। उसके चेहरे पर मुस्कराहट थी—आत्मविश्वास से भरी हुई मुस्कराहट—"हैलो शेखर···।" उसने कहा।

"हैलो डाक्टर···हाऊ आर यू ?" शेखर मुस्कराया।

"बिल्कुल ठीक···।"

"बैठिए।"

"धन्यवाद।" दीपक ने कहा—और शेखर की तरफ कुर्सी खींच कर बैठ गया। शीला ने सर पर साड़ी का पल्लू डाल लिया था।

"कोई कष्ट तो नहीं है।" दीपक ने पूछा।

"कष्ट···कैसा कष्ट ?"

"मतलब यह है कि सिस्टर ठीक तरह से अटेंड कर रही है ना आपको···!"

"बिल्कुल वह मेरा विशेष ध्यान रखती हैं।"

दीपक सर हिलाने लगा—

शेखर ने उसकी ओर सिगरेट का पैकिट बढ़ाया।

"थैंक्स।" यह कहकर दीपक ने सिगरेट ले लिया।

"कल सवेरे ऑपरेशन का प्रोग्राम पक्का है ना ?"

"बिल्कुल···।"

शीला ने कड़वे स्वर में कहा—"हां, सारे सामान हो चुके हैं।"

दीपक चौंक पड़ा।

शेखर के चेहरे पर नागवारी के आसार नज़र आने लगे—वह बोला—"शीला···यह क्या बकवास लगा रखी है।"

"यह बकवास नहीं···मेरे दिल की आवाज़ है।" शीला ने कठोर स्वर में कहा—"इनके सामने ही मैं आपसे कह रही हूं कि मुझे इन पर बिल्कुल भरोसा नहीं है।"

"शीला !"

"तुम्हारे चीखने से मेरे विचार बदल नहीं जाएंगे शेखर···तुम मेरा सुहाग हो···मेरा सब कुछ···मेरे जीवन की इतनी बड़ी बाजी

लगी हो और मैं बोलूं भी नहीं !"

"कितने अफसोस की बात है यह।"

"हां, मुझे भी अफसोस है।" शीला ने कहा—"इस बात पर कि मैं तुम्हारी बातों में क्यों आ गई। तुम्हें यहां क्यों ले आई।"

"शीला...!"

"और क्या मैं तुमसे यह भी नहीं पूछ सकती कि वह लिखित आश्वासन कहां है जिसका डा० दीपक ने वचन दिया था।"

"आपके इस प्रश्न का उत्तर मेरे पास है।" दीपक ने गम्भीरता-पूर्वक कहा—फिर अपनी जेब से एक कागज़ निकालकर शीला को देते हुए बोला—"और यह रहा वह उत्तर...मेरी ओर से लिखित आश्वासन...मैं यही देने आया था।"

इतना कहकर दीपक खड़ा हो गया।

"अरे।" शेखर चौंककर बोला—"बैठो ना दीपक।"

शीला उन दोनों को नज़र अन्दाज करके उस लिखित आश्वा-सन को पढ़ने लगी थी।

"बस अब चलूंगा।"

"नहीं...आपको बैठना पड़ेगा।"

"अगर आप हठ करते हैं तो लीजिए—मैं बैठ जाता हूं।" यह कहकर वह कुर्सी पर बैठ गया।

"शीला की बेवकूफियों के लिए मैं आपसे माफी मांगता हूं।"

"अरे, यह क्या कह रहे हैं आप !"

"इसका दिमाग खराब हो चुका है।" शेखर ने मुस्कराकर कहा—"मुझे उम्मीद है कि आप महसूस नहीं करेंगे।"

"मुझे इनसे कोई शिकायत नहीं है।" दीपक ने सिगरेट की राख को घूरते हुए कहा—"प्रत्येक भावना तथा भ्रम के पीछे कोई न कोई कारण होता है...राख इसलिए बनती है कि उसके पीछे आग का कारण है। आग न हो तो राख कैसे बने और जब राख बन जाती है तो उसके नाजुकपन को अंधा भी महसूस करता है...भ्रम राख की भांति नाजुक ही तो होता है और उसके पीछे किसी न किसी ख्याल की चिंगारी हुआ करती है।"

शेखर की आंखें आश्चर्य से फैलती चली गईं। वह बोला—

"डा० दीपक···एक डाक्टर होते हुए आप इन गहराइयों तक कैसे पहुंच जाते हैं जहां या तो कोई कवि पहुंच सकता है या कोई साहित्यकार।"

"डाक्टर भी मनुष्य ही होता है और जो मनुष्य होता है उसे उस समय तो इन गहराइयों तक पहुंचना ही पड़ता है जब उस पर उंगलियां उठने लगती हैं···इन्हें मुझसे कोई शत्रुता नहीं···इसके बावजूद यह मुझ पर शक करती हैं। इस शक का कोई न कोई कारण तो होगा और जब कारण है तो शक है और शक या भ्रम राख की भांति नाज़ुक होता है इसलिये मनुष्य उसे बड़ी सावधानी से संभाले बैठा रहता है···वह उसका पोस्ट मार्टम नहीं करता पोस्ट मार्टम करे तो राख बिखर न जाए!"

शीला ने लिखित आश्वासन समाप्त करके एक गहरी सांस ली।

० ० ०

हरीश ने अपने कमरे का दरवाज़ा बन्द किया और मारग्रेट की तरफ घूमकर बोला—"मारग्रेट।"

"यस डाक्टर।" मारग्रेट कंपकंपाती रही।

"तुम कांप रही हो?"

"न···न···नहीं तो।"

"झूठ भी बोलती हो।"

"न···न···नहीं।"

हरीश ने हल्का-सा कहकहा लगाया। फिर बोला—"पहले तो तुम मुझसे इतनी भयभीत नहीं रहती थीं।"

"म···मैं।"

"ओह···हमने कई रातें एक साथ बिताई हैं।"

"हां।" मारग्रेट ने जल्दी से सर हिलाया।

"और आज की रात···।" हरीश उस पर झपटा और उसकी यूनीफार्म के ऊपरी बटन खोलकर उसे अपने साथ कसकर भींच लेने के बाद बोला—"यह रात भी मैं तुम्हारे साथ बिताऊंगा। इसलिए कि कल सुबह इतिहास अपने आपको दुहराने की मांग करेगा।"

मारग्रेट उसकी बांहों में मचलकर बोली—"क्या मतलब!"

"वही पेशेन्ट···वही मामला···हालात का वही तिकोन···उस पेशेन्ट की मिसेज़ बहुत खूबसूरत है।"

"म···मगर।"

"अगर-मगर सुनना मेरी आदत नहीं है···ऑपरेशन डा० दीपक करेगा···है ना !"

"हां।"

"पेशेन्ट को अटेन्ड तुम करोगी···है ना ?"

"हां।"

"मुझे यकीन है कि ऑपरेशन सफल होगा।"

"हूं।"

"तुमने वह कहावत सुनी है—आसमान से गिरा खजूर में अटका···।"

"हां।"

"कल यही होगा।"

"क···क्या मतलब।"

"तुम्हें मेरी हिदायत पर अमल करना होगा···आपरेशन सफल हो जाएगा···परन्तु उसके बाद···जबकि वह पेशेन्ट अपने कमरे में पहुंच जाएगा···उसे ब्लीडिंग शुरू हो जाएगी···वेतहाशा ब्लीडिंग ···और यह कारनामा होगा डा० हरीश का···।"

"क···क्या···क्या यह खतरनाक नहीं होगा !"

"मुझे इसकी परवाह नहीं···मैं केवल इतना जानता हूं कि जब हरीश ज़िद पर उतर आता है तो आस-पास वही हुआ करता है··· जिसकी इच्छा डा० हरीश ने की होती है।"

मारग्रेट अब तक कंपकंपा रही थी।

"मारग्रेट।"

"हूं।"

"डर रही हो !"

"न···नहीं।"

"घबराओ मत···डा० हरीश बड़ी मछली है और परिस्थितियों ने उस पेशेन्ट को छोटी मछली बना दिया है। बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है और सागर की व्यवस्था में कोई अंतर

नहीं होता।"

मारग्रेट कंपकंपाती रही—हरीश उसे दबोचता रहा—वह लरजती रही—फिर उसने एक नन्हीं-सी रंगीन मछली की शक्ल इख्तियार कर ली—वह एक नन्हीं-मुन्नी-सी मछली बन गई जो कांप रही थी—थरथरा रही थी। अचानक शार्क मछली ने उसे दबोचा और उसे निगलने लगी।

० ० ०

कैलेन्डर में कृष्णजी की तस्वीर थी और तस्वीर में कृष्णजी अपने होंठों से बन्सी लगाए हुए थे।

श्वेत लम्बा कोट पहने दीपक जब अपने कमरे से बाहर निकलने लगा तो उसकी नजर कैलेन्डर पर पड़ी। वह ठिठक पड़ा—फिर धीरे-धीरे कैलेन्डर की ओर बढ़ने लगा—समीप पहुंचकर उसने दोनों हाथ जोड़ लिए और अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सर झुकाकर बोला—भगवान—मेरी लाज रख लो—मैंने आज तक तुमसे कुछ नहीं मांगा आज अपनी खोई साख की भीख मांग रहा हूं और इसलिए मांग रहा हूं प्रभू कि मैं सच्चाई पर हूं—सत्य की रक्षा के लिए लड़े जाने वाले इस युद्ध में मेरी सहायता करो भगवान क्योंकि तुमने हमेशा सत्य की सहायता करने का वचन दिया था—आज मेरा सर गर्व से ऊंचा कर दो प्रभू।"

बन्सी के पीछे कृष्णजी के अधरों पर मुस्कराहट फैली हुई थी।

० ० ०

जब वह सर झुकाए आपरेशन थियेटर की ओर जाने वाली गैलरी में मुड़ा तो किसी ने आगे बढ़कर उसके सफेद कोट का कालर थाम लिया और उसे मजबूती से पकड़ लिया—यह पकड़ क्षण प्रतिक्षण सख्त होती चली गई।

उसने सर उठाकर देखा। वह शीला थी। उसके सुन्दर नयनों में आंसुओं की बूंदें कंपकंपा रही थीं और वह हाथ कंपकंपा रहा था जिससे उसने डा० दीपक का कालर थाम रखा था।

"शीला···!"

"मिसेज शेखर कहो···।" शीला ने कहा—"एक अबला कहो

"'"एक ऐसी मूर्ख नारी कहो जिसने फन उठाये हुए नाग के आगे छाती तान दी है।"

"मेरा रास्ता क्यों रोका है ?"

"इसलिए कि तुम मेरी खुशियों के रास्ते में आ गए हो।"

"शीला'''!"

"इसलिए कि तुमने एक बेरहम दीवार का रूप धारण कर लिया है जिसके एक ओर मैं हूं और दूसरी ओर मेरा सुहाग—दीवार जिससे सर टकरा-टकराकर मैं घायल हो चुकी हूं।"

"मुझ पर भरोसा रखो शीला—भगवान से दुआ करो।"

"मुझे तुम पर भरोसा नहीं है।" शीला रोने लगी —सिसक-सिसक कर बोली—"नहीं है'''नहीं है।"

"मैंने वचन दिया है।"

"अगर कुछ हो गया तो मैं उस वचन का क्या करूंगी'''सुन लो दीपक'''अगर मेरे सुहाग को कुछ हो गया तो मैं तुम्हारा खून पी जाऊंगी।"

"ऐसा नहीं होगा शीला'''ऐसा नहीं होगा।"

शीला दोनों हाथों से मुंह ढांपकर फूट-फूटकर रोने लगी।

कुछ क्षणों तक डा० दीपक उसे देखता रहा फिर सर झुकाए आपरेशन थियेटर की ओर चल पड़ा।

आपरेशन थियेटर के बाहर बल्ब जल रहा था।

और अन्दर श्वेत वस्त्रों में लिपटी परछाईयां इधर से उधर चकरा रही थीं। सफेद टोपियां ओढ़े, सफेद नकाबों से अपने चेहरे छुपाए कई साए उस मेज के गिर्द थे जिस पर शेखर लेटा हुआ था।

ऐनक के मोटे शीशों के पीछे डा० दीपक की आंखें जल रहीं थीं। वह बार-बार सुकड़ रही थीं और फैल रही थीं। कभी उनमें बेचैनी छा जाती थी—कभी शान्ति के भाव नजर आने लगते।

अपने कार्य में पूर्ण श्रद्धा के साथ तपस्या की भांति व्यस्त दिखाई देते हुए सुन्दर तथा युवा डाक्टर जिसकी आंखों पर मोटे शीशों वाला चश्मा चढ़ा हुआ था—अपने सफेद लिबास में कोई फरिश्ता नजर आ रहा था। ऐसा फरिश्ता जो आकाश से रास्ता भटक कर धरती पर उतर आया हो।

और जब आपरेशन समाप्त हो गया तो उसने ऐनक के मोटे शीशों के पीछे अपनी आंखों में सख्ती पैदा कर ली और उन सख्त निगाहों से वह स्वयं उस सिस्टर की चेकिंग करने लगा जो औजार गिन रही थी। होठों ही होठों में वह सिस्टर के साथ औजार गिनता जा रहा था।

फिर उसके सिकुड़े हुए नेत्र इत्मीनान के साथ फैलने लगे।

० ० ०

वह गैलरी में किसी ऐसी मछली की तरह तड़प रही थी जिसे पानी से निकालकर सूखे में डाल दिया गया हो—बीतने वाला प्रत्येक क्षण उसके अस्तित्व पर एक कठोर आघात बनकर लग रहा था। आपरेशन थियेटर के बाहर लगातार जलने वाला बल्ब एक निर्दयी राक्षस का सा रूप धारण कर चुका था।

अन्दर आपरेशन हो रहा था।

वहां उसका सुहाग खून में डूबा अचेत पड़ा होगा—अपने प्रतिद्वन्द्वी की दया पर—। वह तड़पती रही—आंसू बहाती रही।

फिर जब आपरेशन थियेटर का दरवाजा खुला तो उसका दिल मानो बैठने लगा, वह सीधी खड़ी हो गई।

डा० दीपक बाहर निकला था।

उसने चमकती निगाहों से डा० दीपक को देखा—वह उसके निकट आ रहा था। समीप पहुंचकर वह रुक गया।

वह उसे घूरती रही। फिर पागलों की तरह चीखी—"कहो…सांप क्यों सूंघ गया है तुम्हें!"

"आपरेशन सफल हो गया है…।"

"स…स…सच!"

"झूठ बोलना मेरी आदत नहीं।"

"द…द…दी…दी…दीपक!"

डा० दीपक ने उसका कंधा थपथपाया और सर हिलाकर बोला—"हां…शीला आपरेशन सफल हो गया है अब तो तुम खुश हो…अब तो तुम्हें मुझ पर विश्वास है।"

शीला उसकी बात का उत्तर देने के बजाए आपरेशन थियेटर की ओर लपकी जहां से शेखर को लाया जा रहा था।

आंसुओं में भीगी एक मुस्कान डा० दीपक के अधरों पर फैल गई। सर झुकाए वह अपने कमरे की ओर चल पड़ा।

० ० ०

"और अब।" हरीश गुर्राया—"जबकि आपरेशन सफल हो चुका है...वह वचन पूरा हो गया जो डा० दीपक ने शीला को दिया था।"

मारग्रेट की आंखें कंपकंपाने लगी—

"परन्तु...अभी उस वचन को पूरा होना है जो हरीश ने अपने आपको दिया था।"

कंपकंपी-सी छा गई मारग्रेट के पूरे शरीर पर।

"मारग्रेट!"

"यस डाक्टर...।"

"कांप रही हो!"

"न...न...नहीं।"

"झूठ भी बोलती हो।"

"न...न...नहीं।"

"कायर...।" वह गुर्राया—"बस डर गईं।"

"न...न...नहीं तो...!"

"अगर इस तरह डरती रही तो जिन्दगी की असंख्य चुनौतियों का मुकाबला किस तरह करोगी।"

"ड...ड...डाक्टर!"

"तुम्हारी ड्यूटी शुरू हो चुकी है।"

"हां...हां।"

"अब पेशेन्ट तुम्हारे चार्ज में है...।"

"हां...।" मारग्रेट गहरी-गहरी सांसें लेने लगी।

"सब निश्चिन्त हो चुके हैं।"

"हां।"

"खुद डाक्टर दीपक भी, उसके विचार में अब मरीज को कोई खतरा नहीं है लेकिन मैं भी डाक्टर हूं और एक डाक्टर की हैसियत से मैं जानता हूं कि खतरा अभी भी है।"

"क...कैसे।"

"ब्लीडिंग हो सकती है।"

"म···मगर···।"

"और वह होगी···और जब होगी तो तुम घबराई हुई डाक्टर दीपक की तरफ भागोगी···बस वही अवसर है जबकि तुम्हें लाजवाब ऐक्टिंग करनी है।"

"हूं।"

"हैमरेज!" हरीश बड़बड़ाया—फिर हल्का-सा कहकहा लगाकर बोला—"अगर खून की आवश्यकता पड़ी तो उस ग्रुप का खून यहां मिल ही नहीं सकेगा।"

"क···क्या मतलब?"

"शेखर वाले ग्रुप का खून हास्पिटल में नहीं है···आ···हा···हा मैंने कच्ची गोलियां नहीं खेली मारग्रेट···मेरा हर वार भरपूर हुआ करता है···।"

मारग्रेट सूखे पत्ते की तरह कांपने लगी।

"डर रही हो···कायर।" हरीश ने कहा—और हलका-सा कहकहा लगाकर रह गया।"

० ० ०

"तेरा लाख-लाख शुक्र है भगवन्।" दीपक की आवाज आभार के एहसास में भरी हुई थी—"तूने मेरा मान रख लिया प्रभू।"

कैलेन्डर में कृष्णजी की तस्वीर लगातार मुस्करा रही थी।

आहट सुनकर दीपक चौंक पड़ा—उसने पलटकर देखा—दरवाजे में शीला खड़ी थी—उसका चेहरा सपाट था—किसी भी प्रकार की भावनाओं से रहित।

"आओ शीला।"—दीपक ने कहा।

शीला धीरे-धीरे चलती हुई कुर्सी तक पहुंची।

दीपक अपनी कुर्सी पर बैठता हुआ बोला—"बैठो।"

शीला बैठ गई।

"किसलिए आई हो।"

"यह मालूम करने के लिए कि जब उन्हें होश आ जाएगा तो क्या चीज उन्हें देनी पड़ेगी।"

दीपक ने मुस्कराकर कहा—"अब भी अपने ही मतलब से आई हो।"

"क्या ?"

"म···मैं समझा था कि तुम मेरा शुक्रिया अदा करने आई हो।"

"कैसा शुक्रिया !"

"जब तुम्हें मालूम ही नहीं तो बताने से क्या फायदा।"

"आपने जो कुछ किया आपका कर्त्तव्य था।"

"करते हैं कत्ल और हाथ में तलवार भी नहीं···।" दीपक के होठों पर फीकी-सी मुस्कराहट फैल गई—वह कहता रहा—"मैं करूं तो कर्त्तव्य···तुम करो तो मजबूरी, इस खेल में मेरी किस्मत में तो केवल हार लिखी हुई है।"

"म···मैं आपसे काम की बात पूछने आई थी।"

"शीला।"

"मिसेज शेखर···!" शीला ने सर उठाकर शुद्धि की।

"हां···मिसेज शेखर···।" दीपक ने उदास स्वर में कहा—फिर पूछने लगा—"तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं था ना।"

"नहीं था।"

"और अब ?"

"अभी कह नहीं सकती।"

"क्या मतलब ?" दीपक उछल पड़ा।

"मुझे उस समय तक यकीन नहीं आ सकता जब तक मैं उन्हें लेकर अपने घर न पहुंच जाऊं।"

"कितनी सख्त हुआ करती हैं तुम्हारी शर्तें।"

शीला ने कोई उत्तर नहीं दिया।

० ० ०

स्पेशल रूम नम्बर सात का दरवाजा लरजने लगा—फिर उसमें झिरी-सी नजर आने लगी। धीरे-धीरे दरवाजा खुलने लगा। दरवाजे के रास्ते से हरीश बाहर निकला। सख्त सरदी के बावजूद उसका चेहरा पसीने में भीग रहा था—वह बहुत घबराया हुआ नजर आ रहा था।

गैलरी में मारग्रेट को टहलता हुआ देखकर उसने इत्मीनान की सांस ली। अपने पीछे दरवाजे को धीरे-से बन्द किया—फिर इधर-उधर देखकर तेजी से मारग्रेट की ओर लपका।

मारग्रेट के चेहरे पर हवाइयां-सी उड़ रही थीं।

हरीश ने सरगोशी की—"मारग्रेट।"

"हूं।"

"इस गैलरी से हट जाओ। इधर आओ मेरे साथ···मेरे कमरे में।" यह कहकर वह तेजी से अपने कमरे की तरफ चल पड़ा।

मारग्रेट साए की तरह उसके पीछे थी।

अपने कमरे में पहुंचकर हरीश ने दरवाजा अन्दर से बन्द किया और इस प्रकार गहरी-गहरी सांसें लेने लगा जैसे मीलों पैदल चल कर आया हो।

लगभग यही दशा मारग्रेट की थी।

जब हरीश ने अपनी सांसों पर काबू पा लिया तो बोला—"मारग्रेट···मारग्रेट।"

"क्या बात है!"

"किसी ने देखा तो नहीं था!"

"नहीं।"

"कोई इस तरफ से गुजरा था?"

"नहीं···।"

"तुम होशियार रही थीं ना?"

"यस डाक्टर।"

"गुड···!" हरीश मुस्कराया—"इसका मतलब यह है कि भाग्य भी मेरा साथ दे रहा है···मैं सपने में भी नहीं सोच सकता था कि सब कुछ इतनी आसानी से हो जाएगा।"

"हूं।"

"अब तुम्हें क्या करना है।"

मारग्रेट रिस्ट वाच की ओर देखकर बोली—"अब से ठीक पांच मिनट बाद···।"

"हां···।" हरीश ने बेचैनी के साथ कहा—"तुम्हें डा० दीपक को इनफार्म करना है कि रोगी की दशा अचानक बिगड़

गयी है।"

"यस डाक्टर।"

"और इसके अलावा और क्या करना है तुम्हें !"

"अगर एम० एस० (मेडिकल सुपरिन्टेंडेंट) ने आपके बारे में पूछा तो मैं उन्हें बता दूंगी कि आपको मैंने पेशेन्ट की हालत बता दी है।"

"गुड···तुम बहुत समझदार हो।"

मारग्रेट मुस्कराने लगी—लेकिन यह मुस्कराहट बहुत ही फीकी थी।

० ० ०

"तो आपको अब तक मुझ पर विश्वास नहीं है।" दीपक ने पूछा।

"हां।"

"खैर मेरा भाग्य।"

"वैसे आपका क्या विचार है···आप कब तक उन्हें छुट्टी दे देंगे।"

"तीन-चार दिन बाद।"

"अब कोई खतरे वाली बात तो नहीं है !"

"हरगिज नहीं।"

"न जाने क्यों मेरा दिल डर रहा है।" शीला ने कमजोर स्वर में कहा।

अचानक कमरे का दरवाजा एक झटके के साथ खुला।

वह दोनों चौंककर दरवाजे की ओर देखने लगे—वहां ड्यूटी नर्स मारग्रेट खड़ी हांफ रही थी।

"क्या बात है।" दीपक ने चकित होकर पूछा।

"ब···ब्लीडिंग डाक्टर···ब्लीडिंग।"

"क्या ?" दीपक उछल कर खड़ा हो गया।

"यस डाक्टर ब्लीडिंग।"

"यह क्या बकवास लगा रखी है तुमने, क्या कहना चाहती हो तुम ?"

"म···म···मिस्टर शेखर···ब्लीडिंग।" मारग्रेट हांफने लगी

थी। क्षण भर को दीपक पर सन्नाटा-सा छा गया।

शीला की तो यह हालत थी जैसे काटो तो शरीर में रक्त नहीं।

"सिस्टर।"

"यस डाक्टर…।"

"डा० हरीश कहां है ?"

"कमरे में थे अपने।"

"तुमने उन्हें इनफार्म किया।"

"यस डाक्टर…।"

"अब कहां हैं वह ?"

"पेशेन्ट के कमरे में…शायद वहीं हैं मैंने उन्हें उधर जाते हुए देखा था।"

"उसे जल्दी से तलाश करो…अगर वह वहां नहीं है तो जहां है वहां से उसे लाओ…हरी अप।"

मारग्रेट तेजी से कमरे से बाहर निकल गई।

शीला जो अब तक पत्थर के बुत की तरह स्थिर रही थी—थर-थर कांपने लगी—उस पर हिस्टीरिया की-सी हालत छा गई। सहसा वह चिल्लाई—"मैं न कहती थी…आखिर वही हुआ ना …मैं तेरा खून पी जाऊंगी कमीने।"

वह दीपक की तरफ झपटी—लेकिन दीपक ने उसे परे झटक दिया और तेजी से बाहर की तरफ चल पड़ा।

० ० ०

भागते-भागते मारग्रेट हरीश से टकरा गई—फिर उसे देखा तो हंसने लगी।

"क्या बात है मारग्रेट ?"

"त…त…तुम कहां थे। एम० एस० तुम्हें बुला रहे हैं।"

हरीश मुस्कराने लगा फिर बोला—"मुझे मालूम था कि वह मुझे बुलाएगा।"

"क…क्यों ? क्या उसे सन्देह है। मारग्रेट के होंठ कपकंपाने लगे।

"नहीं…उसे मेरी सहायता की आवश्यकता है।" हरीश ने

सिगरेट की राख झाड़ी—"क्योंकि इस प्रकार के केसों का मैं विशेषज्ञ हूं।"

"च···च···चलो मेरे साथ।"

"अभी नहीं···जरा रुककर चलेंगे।"

"म···मगर।"

"घबराओ मत···सब कुछ मुझ पर छोड़ दो···यह बताओ कि ब्लीडिंग बन्द हुई ?"

"हां।"

"कब ?"

"अभी···डा० दीपक ने पेशेन्ट के इंजेक्शन लगाया है।"

"पेशेन्ट की हालत !"

"सीरियस है। खून बहुत निकल चुका है।"

"हरीश का हाथ था वह।" हरीश ने दांत पीसे।

"च···च···चलो ना डाक्टर !"

"चलता हूं···यह बताओ कि अब डा० दीपक क्या कर रहा है।"

"खून का प्रबन्ध, उसने पूरे नर्सिंग होम को हिलाकर रख दिया है। सब भाग-दौड़ कर रहे हैं।"

"और सब मात खाएंगे।" हरीश गुर्राया—"सबको मुंह की खानी पड़ेगी।"

"च···चलो ना डाक्टर !"

"ठहरो···मुझे यह सिगरेट खत्म कर लेने दो।" हरीश ने कहा और एक गहरा कश खींचकर धुएं के छल्ले मुंह से बाहर निकालने लगा।

मारग्रेट का चेहरा सफेद पड़ता जा रहा था।

o o o

"हैलो···हैलो।" दीपक ने बेचैनी के साथ माउथ पीस में कहा, "यस डाक्टर भट्टाचार्य, क्या ?···इस ग्रुप का खून आपके पास भी नहीं है···क्या ?···जी० टी० हास्पिटल में मिल सकता है···मगर वह तो बहुत दूर है···वहां से यहां तक खून आने में तो काफी समय लग जाएगा···एक बार फिर दिखवाइए···प्लीज···डा० भट्टाचार्य

प्लीज हां···हां···मैं आपके फोन की प्रतीक्षा करूंगा।" यह कहकर दीपक ने रिसीवर रख दिया और माथे का पसीना पोंछने लगा।

कमरे में शीला की सिसकियां गूंज रही थीं—फिर उस ट्राली की आवाज सुनाई दी जिसे एक नर्स घसीटती हुई उस कमरे में लाई थी ट्राली में औजारों के अलावा ज़रूरत का सारा सामान नज़र आ रहा था।

फिर वहां हरीश दाखिल हुआ—घबराया हुआ-सा जैसे वह बड़ी भाग-दौड़ करके आया हो।

दीपक पागलों की तरह उसकी तरफ लपका और बोला—"हरीश कहां थे तुम ?"

"नीचे गया था।"

"क्यों ?"

"मि० शेखर के ग्रुप का खून लेने।"

"नहीं मिला ?" दीपक की आवाज़ रोने जैसी हो गई।

"नहीं।"

"अब क्या होगा हरीश···!"

"मैंने दूसरी जगहों पर भी फोन करके पूछा मगर कहीं भी इस ग्रुप का खून नहीं मिल रहा है।"

"खून···खून···!" दीपक बड़बड़ाने लगा—फिर उछलकर बोला—"अरे···हरीश मेरा खून भी तो उसी ग्रुप का है।"

"क···क···क्या ?" हरीश चौंककर दो कदम पीछे हटा।

"हां···हां घबराहट में मैं तो भूल ही गया था। प्लीज हरीश, जल्दी करो।"

"म···म ··मगर।"

"यह अगर-मगर का वक्त नहीं है···अगर शीघ्र ही शेखर को खून न दिया गया तो···।"

"परन्तु उसे काफी मात्रा में खून की आवश्यकता है।"

"तो इसमें परेशानी की क्या बात है ?"

"तुम अगर इतना खून दोगे तो स्वयं तुम्हारी जान को खतरा हो जाएगा।"

"हो जाने दो···तुम इसकी परवाह मत करो···मैं दूसरा बैड

मंगवा लेता हूं।"

शीला रोना भूलकर आश्चर्य से उन दोनों को देखने लगी थी।

"नहीं···यह मुझसे नहीं हो सकेगा दीपक।"

"हरीश !" दीपक उसे झंझोड़ कर बोला—"शेखर हमारा मरीज है···तुम एक डाक्टर हो और डाक्टर का काम मरीज को बचाना होता है उसे बचाने के लिए प्रत्येक सम्भव प्रयत्न करना जरूरी होता है—मरीज की जान बचाना ही तो हमारा धर्म होता है हरीश।"

"परन्तु एक डाक्टर होने के नाते मेरा यह भी कर्त्तव्य है कि एक मरीज को बचाने के लिए दूसरे के जीवन से खिलवाड़ न करूं।"

"मुझे कुछ नहीं होगा हरीश···कुछ नहीं होगा।"

"मुझे बहलाने की कोशिश मत करो···मैं जानता हूं कि इतना खून निकालने का मतलब क्या होगा।"

"हरीश···हरीश···मैं तुम्हारे पैर पकड़ता हूं···भगवान के लिए मान जाओ यदि और ज्यादा देर हो गई तो शेखर बच नहीं सकेगा।"

"सौरी दीपक···मैं मजबूर हूं।"

"हरीश···हरीश···।" दीपक उसके पैर पकड़कर बोला—"तुम मेरे मित्र हो···बचपन के यार···क्या तुम मेरे लिए इतना भी नहीं कर सकते !"

"हरगिज नहीं···दीपक···हरगिज नहीं।"

एक झटके के साथ दीपक ने हरीश के पैर छोड़ दिए और खड़ा हो गया —अचानक उसकी निगाहें ट्राली में रखे हुए औजारों पर पड़ीं। वह उन औजारों पर झपटा और आश्चर्यजनक फुर्ती के साथ एक कैंची उठाकर उसने अपने अपने पेट में भोंक ली—पूरी कुव्वत से, पूरी ताकत से। उसके पेट से थल-थल खून की धारा बहने लगी —उसने ट्राली का सहारा लिया और मुस्कराकर बोला—"अब तो लोगे मेरा खून···अब तो लोगे।"

"दी···पक !" हरीश पागलों की तरह चीखा—उसकी आंखें इस तरह फटीं जैसे बाहर निकल आएंगीं।

"खून ले लो मेरे यार···।" दीपक लड़खड़ाता हुआ उसकी ओर

बढ़ा और उसका हाथ अपने हाथ में लेकर बोला—"बचपन की दोस्ती का हक मुझे यह वचन देकर निभा दो कि तुम शेखर को बचा लोगे—बोलो हरीश···वचन दो···म···म मुझे वचन दो।"

"दी···पक···दीपक!" हरीश फूट-फूटकर रोने लगा।

"तुम्हारे यार पर विश्वास नहीं था उसे, जिसके लिए तुम्हारे यार ने अपना सब कुछ लुटा डाला···वह विश्वास मुझे वापस दिला दो हरीश···मैं तुमसे भीख मांगता हूं···वह विश्वास मुझे वापस दिला दो।"

शीला इस प्रकार निश्चल खड़ी थी मानो उसे सांप सूंघ गया हो।

"वचन दे हरीश···म···म मुझे वचन दे।"

"म···मैं वचन देता हूं···म···म···मैं।" हरीश ने भर्राई हुई आवाज में कहा—फिर जब उसे अपने आप पर काबू नहीं रहा तो वह दीवार से अपना सर फोड़ने लगा यहां तक कि उसके माथे पर खून की चादर फैल गई।

° ° °

स्पेशल रूम नम्बर सात के पेशेन्ट शेखर की हालत खतरे से बाहर हो चुकी थी और यह लुंगिया हास्पिटल के मेडिकल सुपरिन्टेंडेन्ट के आदर्शों की जीत थी। परन्तु फिर भी लुंगिया हास्पिटल पर शोक छाया हुआ था। सफेद यूनिफार्म पहने सारी नर्सें और सारा स्टाफ शोकमय मुद्रा में उस कमरे के बाहर चुपचाप खड़ा था जहां उनके आदर्शवादी एम० एस० का शव रखा था। कमज़ोर आंखों वाला उनका नौजवान एम० एस० जिसके चेहरे पर हमेशा उन्होंने मुस्कराहट देखी थी। मरने के बाद भी उसके चेहरे पर मुस्कराहट थी। उन सबके दिल खून के आंसू रो रहे थे। उस नौजवान और खूबसूरत एम० एस० के लिए जिसने कभी किसी की खुशियों में भाग नहीं लिया था मगर हां, हर एक के दुःख में साथ हुआ करता था—जो हर एक के साथ आंसू बहाने में शामिल हो जाया करता था। लुंगिया हास्पिटल में हर समय घूमती रहने वाली आदर्शों की वह चलती-फिरती इमारत आज बैठ गई थी। गैलरी में खड़े सैकड़ों मनुष्यों की आंखें चुपचाप आंसू बहा रही थीं। कभी-कभी

कोई वेकाबू होकर बिलख-बिलख कर रोने लगता तो सबके रोंगटे खड़े हो जाते।

° ° °

और अन्दर कमरे में आदर्शों की वह ऊंची इमारत मुस्करा रही थी जिसने अपने प्राण देकर किसी से विश्वास लेने की कोशिश की थी। नवजवान एम० एस० के शव की आंखों पर अब भी वही ऐनक चढ़ी थी, मोटे शीशों वाली और उसकी प्रेमिका वड़ी गम्भीरता से संभल-संभलकर पग उठाती हुई उसके शव की ओर बढ़ रही थी।

निकट पहुंचकर शीला रुक गई—फटे-फटे नयनों से वह काफी देर तक उसे देखती रही—फिर धड़ाम से उसके सीने पर गिरकर उसकी लाश से लिपटकर फूट-फूटकर रोती हुई बोली—"म···मुझे क्षमा कर दो दीपू···मुझे क्षमा कर दो···मैं तुम्हारी सौगन्ध खाकर कहती हूं कि तुमने फिर से मेरा विश्वास जीत लिया। तुम सचमुच महान हो···आकाश की तरह ऊंचे।"

वह उसके शव को झंझोड़कर पागलों की तरह वोली—"तुम चुप क्यों हो···तुम बोलते क्यों नहीं···दीपक···दीपक देखो मैं फूट-फूट कर रो रही हूं और तुम मुस्करा रहे हो···इतने निर्दयी तो तुम कभी नहीं थे!"

नौजवान एम० एस० के वचपन का यार हरीश दीवार से लिपटकर बिलख-बिलख कर रो रहा था। वार-वार दीवार से अपना सर टकरा रहा था—उसने खुद को बुरी तरह घायल कर लिया था।

लेकिन उन दोनों से लापरवाह नौजवान एम० एस० मुस्करा रहा था और उसकी यह मुस्कान चिरस्थाई थी।

बाहर कोई चीख-चीखकर रोने लगा था।

○ ○

लोकप्रिय उपन्यासकार

# मनोज

के

दिल को छू लेने वाले, उपन्यास

- खामोशी
- जलती चिता
- फूल और कांटे
- सफर
- कसम
- ममता
- वचन
- मिलन
- बाबुल की गलियां
- अन्याय
- मुसाफिर
- गुड़िया
- अलबेला

के बाद पढ़ें

## वियोग

यदि आप रंजीदा और दिल को छू लेने वाली कहानियां पसन्द करते हैं और आपने आज तक मनोज का कोई भी उपन्यास नहीं पढ़ा है तो विश्वास कीजिये आप आज तक केवल उस चीज से वंचित रहे हैं जिसकी आपको बहुत पहले से तलाश थी। प्रमाण के लिए मनोज का केवल एक उपन्यास पढ़कर देख लीजिये—आपके होंठों पर फैल जाने वाली मुस्कान अथवा आपकी आंखों से टप-टप बहने वाले आंसू आपको विश्वास दिला देंगे कि अमर हो जाने वाले पात्रों को इकट्ठा करके जो कहानी मनोज लिखा करता है, वह आपकी अपनी ही कहानी होती है।


डा. डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मृति
पुस्तकालय

हिन्दी कथा-साहित्य में जिसका नाम आकाश को ऊंचाइयों को छू रहा है। जिसकी लोकप्रियता एक मिसाल बन गई है। जिसके नए उपन्यास सिर्फ मनोज पाकेट बुक्स में प्रकाशित होते हैं—कहीं अन्यत्र नहीं।

प्रेम बाजपेयी

नित नूतन कहानियों का सृजनकर्ता अब मानव जीवन की नई उथल-पुथल लेकर आपके सामने आ रहा है। आप कभी मुस्कराने तो कभी रोने पर मजबूर हो जायेंगे।

सम्बन्ध

समाज और उसके बनते-मिटते रिश्तों की कहानी। भावनाओं का अनोखा खेल। एकदम अछूता कथा-शिल्प !

मनोज पाकेट बुक्स

१५८४, दरीबा कलां, दिल्ली-६

डबल सीक्रेट एजेण्ट ००१

राम-रहीम सीरी

के सुप्रसिद्ध लेख

# रायजाद

का बिल्कुल नया उपन्यास

गद्द

के बाद प्र

## मौत का मह

जो शीघ्र ही "मनोज वाल पाकेट बुक्स' में ...
प्रकाशित हो रहा है।
पढ़ना न भूलियेगा।

अपनी प्रति आज ही अपने शहर के बुक स्टाल एजेंट को
करा दें। कहीं ऐसा न हो कि पुस्तक खत्म हो जाये और
पुस्तक को पढने के लिए तड़पते रह जायें।